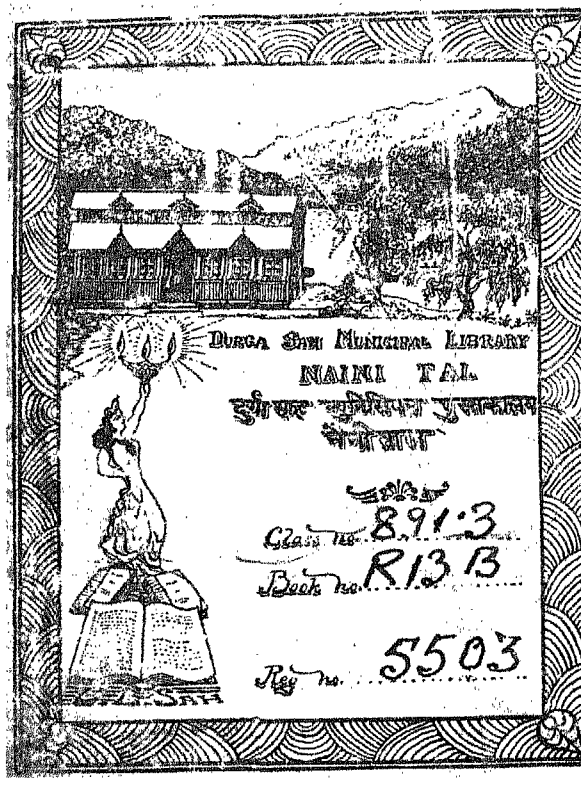
DURGA SAH MUNICIPAL LIBRARY
NAINI TAL
Class no. 891.3
Book no. R13B
Reg no. 5503

बेसवा

रईस अहमद जाफरी

अनुवादक
विजयगोपाल श्रीवास्तव बी० ए०

सर्वाधिकार सुरक्षित

891·3
R13/3

इस नॉवल के सब पात्र काल्पनिक हैं।

किसी से समानता की जिम्मेदारी पब्लिशर या लेखक पर नहीं है।

मूल्य २ रुपये ५० नये पैसे

Durga Sah Municipal Library
NAINITAL
दुर्गासाह म्युनिसिपल लाइब्रेरी
नैनीताल
Class No. 891·3
Book No. R13/3
Received on 1 Aug. 62

पब्लिशर्स :—
पैरामाउंट पब्लिशिंग को० इ० सो० लि०
२६५०, कटरा खुशहाल राय, दिल्ली।

BESWA—Rais Ahmad Jafri—2·50

मुद्रक :—प्रेस आफ दी वर्कर्स, किनारी बाजार, दिल्ली।

एक

अलीखां का बड़ा अच्छा कारोबार चल रहा था। बड़े अच्छे का तात्पर्य यह नहीं कि वह लखपति था—इसका मतलब केवल इतना है कि वह न किसी का लेनदार था न देनदार, अपना व्यवसाय करता था, अपनी रोजी कमाता था, हजार पाँच सौ जमा भी रहते थे—अली का परिवार केवल तीन सदस्यों पर आधारित था—एक पत्नी, हमीदा-बेगम—एक लड़का, वलीखाँ और एक लड़की जाहिदा। यह था उसका छोटा सा परिवार—

भगवान की कृपा थी। व्यवसाय सफलता पर था—बड़े अच्छे दिन बीत रहे थे—जाहिदा सब से बड़ी थी—तेरह वर्ष की। वली आठ वर्ष का था। जाहिदा छठे दर्जे में और वली चौथे दर्जे में पढ़ता था। अली खां दिन भर अपनी दुकान पर रहता और सन्ध्या समय घर आजाता।

एक दिन हमीदा बेगम रसोई घर में खाना पका रही थी। बच्चे स्कूल जाने की तैयारी कर रहे थे। अचानक दरवाजे पर जोर-जोर दस्तक लगी। वली ने बिखरे किताबों को पलंग पर छोड़कर द्वार खोला तो वहीं से चिल्ला पड़ा—हाय अम्मी, अब्बा को क्या हो गया—हमीदा दौड़ी आई, तो देखा लोग अलीखां को हाथों में लिये खड़े थे। सर और बाहों से लहू बह रहा था। वह चेतना शून्य थे। हमीदा बेगम बद-हवासी से अन्दर भागी, जल्दी से बिस्तर ठीक किया। लोगों ने अलीखां

को पलंग पर लिटाया। हमीदा बेगम ने मोहल्ले के एक साहिब से प्रार्थना की कि वह डाक्टर फसीह को बुला दें। ऐसे समय में कोई इन्कार कैसे करता! वह गये तुरन्त डाक्टर को लिवा लाए। डाक्टर ने मरहम पट्टी की, एक सूई लगाई, घर वालों को विश्वास दिलाया कि घबराने की कोई बात नहीं है, खून अधिक निकल जाने से कमजोरी आ गई है और यह कहकर वह चले गये—इन्शाअल्ला दोपहर तक होश में आ जायेंगे।

दुकान की छत गिर जाने से बेचारे अली को यह चोट खानी पड़ी थी—हमीदा इधर पति की सेवा में लगी और दोनों बहिन भाइयों को उधर दुकान पर भेजा कि ताला लगा आयें। वह दोनों दुकान का ताला लगाकर आ गये। अब हमीदा दोपहर होने का बेचैनी से प्रतीक्षा करने लगी ताकि अली की चेतना लौटे तो उसे सुख-शान्ति मिले। जिस घर में हर समय प्रसन्नता का राज्य था उसमें अब भय का वातावरण छा गया था।

दोपहर बीत गई मगर अली को होश न आया। हमीदा को चिन्ता हुई। उसने दूसरे डाक्टर को बुलवाया—दूसरे डाक्टर ने अपनी बुद्धिमानी दिखाने के लिये और पहले को अनाड़ी सिद्ध करने के लिये सारी पट्टियां खोल डालीं। कहा, यह गलत बंधी हैं। इस दोबारा जर्राही से अली के घाव और भी छिल गये। किसी तरह डाक्टर ने अपना कर्त्तव्य निभाया और एक सूई भी लगाई। आधी रात तक होश आजाने का निश्चय कराके चला गया—हमीदा पत्थर की मूर्ति बनी पति के सिरहाने बैठी रही। बच्चे भी सुबह से परेशान थे और कुछ खाया पिया न था। रात के बारह बज गये मगर अली को होश न आया। हमीदा ने सोचा वह रात कैसे काटेगी। एक बार फिर डाक्टर को दिखा दे तो अच्छा हो।

सवाल यह था कि डाक्टर कौन बुलाने जाये।

बच्चों के बस की बात न थी। पड़ोसी सब सो चुके थे। अन्त में मियां के प्रेम ने उसे साहस दिया और वह डाक्टर के घर पहुंची। हमीदा को देखते ही वह पहचान गया। कहने लगा—मैं रात में मरीज देखने नहीं जाया करता। हमीदा ने हाथ पैर जोड़े तो डाक्टर घूरते हुए और पास आ गया। धीरे से बोला—शौहर की जान के बदले तुम क्या कुरबानी दे सकती हो ?

हमीदा क्षण भर के लिये कुछ न समझ सकी मगर डाक्टर उत्तर की प्रतीक्षा में उसी तरह घूरे जा रहा था।

हमीदा की आयु इस समय अठाइस-उन्तीस वर्ष की थी। कवियों के मतानुसार यह नारी के जीवन का वह युग है जब उसमें पुरानी शराब की सी मदमस्ती होती है—पूरा खिला हुआ गुलाब का फूल भी होती है। हमीदा के हुस्न की धूम थी भी। जब ब्याह हुआ था तो औरतें कहती थीं जिस स्थान पर यह बैठ जाती है, वह स्थान ही सजा हुआ सा प्रतीत होने लगता है। और शादी से आज तक हमीदा हंसी खुशी से दिन बिताती आई, पैसे से भी भरपूर रही, इसलिये उसकी सुन्दरता में शादी के बाद के वर्षों ने चार चांद ही लगाये—जवानी ढलने के बजाय उभरी ही थी। यद्यपि जाहिदा तेरह वर्ष की थी—मगर सन्तान उत्पत्ति ने भी उसके सेहत और हुस्न पर कोई प्रभाव न डाला था।

अन्ततोगत्वा डाक्टर की निगाहों को पढ़ते हुए हमीदा ने कहा—

डाक्टर साहब, मैं जिस काबिल हूं उससे इन्कार नहीं।

—डाक्टर ने और खुलने का प्रयत्न करते हुए कहा —

—मेरा मतलब तो तुम समझ गई होगी। यानी मैं जिस्म की कुरबानी चाहता हूं।

हमीदा का पारा चढ़ गया। वह नागिन की तरह बल खा गई, डाक्टर के गालों पर जोर का एक थप्पड़ जमाकर कहने लगी—

—बेशर्म, क्या तुझे डाक्टरी की सनद इसीलिए दी गई है कि तू इलाज के बदले असमत का सौदा करे। अल्लाह के अजाब से डर।

वहां से हमीदा डाक्टर फसीह के घर पहुँची। फसीह ने आवाज सुनते ही कहा—अरे बहन, मैं तो शाम ही से सोच रहा था कि मेरे मरीज का क्या हाल है। खैर तो है इस वक्त कैसे आई हो?

हमीदा ने कहा—डाक्टर साहब, मेरी बेवकूफी और फिक्र ने एक और डाक्टर को बुला लिया था मगर वे अब तक बेहोश हैं।

डाक्टर फसीह हंसा, कहने लगा—कोई बात नहीं है बहन, इसमें बेवकूफी कैसी, यह तो आपकी मरजी है जिसे चाहें दिखायें, जिससे चाहें दवा लें। चलिये, मैं चलता हूं।

डाक्टर फसीह वैसे भी पहले से आते जाते थे। वली, हमीदा और बच्चों का इलाज करने घर पर बराबर जाया करते थे।

जब हमीदा डाक्टर को लेकर घर पहुंची तो अली को होश आ चुका था। बच्चे सो रहे थे। हमीदा को बिन मांगे मोती मिले, रोआं-रोआं फूल उठा और पूछने लगी—वली के अब्बा, आपको होश तो आ गया। अल्ला का शुक्र है। मैं डाक्टर साहब को लेने गई थी। मगर अली ने बिल्कुल उल्टा उत्तर दिया—

—काश, मैं मर जाता।

डाक्टर ने अली को देखा, एक सुई और लगाई, पट्टियों को यूं ही रहने दिया। जब चलने लगा तो हमीदा ने फीस देनी चाही। डाक्टर ने लेने से इन्कार कर दिया और कहा—

—जब तक मैं अपने मरीज को अच्छा न देख लूं। फीस नहीं लूंगा। हमीदा ने जिद ठीक नहीं समझी और मुस्करा कर रुपये वापिस रख लिए।

डाक्टर चला गया तो हमीदा ने बात करनी चाही मगर अली ने बात न की। उस समय अली के मन में मित्रों की बातें सर उठा रहीं थीं—अमां यार अली, अभी डा० फसीह के यहां से आ रहा हूं, तेरी बीवी भी बैठी थी।

—मियां अली, क्या किस्सा है जब देखो तुम्हारी बीवी डा० फसीह के पास बैठी मिलती है—मियां कहीं कुल्हिया में गुड़ न घुल जाए।

—भई अली, तुम्हारी बीवी की तबियत आजकल क्या कुछ खराब है, रोज डा० फसीह के यहां देखता हूं।

और आज भी जब उसे होश आया तो हमीदा डा० फसीह के घर गई थी। फसीह ने चलते वक्त फीस भी न ली। अली को विश्वास हो गया कि उसकी बीवी जरूर बिगड़ चुकी है और डा० फसीह के साथ जरूर कुछ गड़बड़ है। एक तो शारीरिक दुःख, दूसरे आन्तरिक क्लेश, अली के लिए बड़े घातक बन गए। वह स्वस्थ तो हो चला था मगर केवल इस आधार पर कि उसके घाव भरने लगे थे मगर शरीर कमजोर होता चला जा रहा था। उसकी सारी पट्टियां खुल गईं। केवल एक सर की पट्टी रह गई। डाक्टर का कहना था कि सर की हड्डी अभी अपनी जगह बैठी नहीं। इसी कारण घाव भी रस रहा था।

अब अली इस योग्य अवश्य हो गया कि वह दुकान पर जा सके। जब वह पहले दिन दुकान गया तो इधर तो दुकान की ओर बढ़ा उधर फसीह मरीजों को देखता हुआ हमीदा के पास आ पहुंचा और हमीदा से कहने लगा—

—खुदा का शुक्र है बहन, अली साहब अच्छे हो गए। और इस वक्त यह जानकर और भी खुशी हुई कि आज वह दुकान पर भी गए हैं। बहरहाल यह तो मेरी ड्यूटी थी। हां अब आप मेरी फीस अदा कर सकती हैं। कुल साढ़े चार सौ रुपए होते हैं उसमें से तीन सौ तीस रुपये

तो मेरी फीस के हैं, मैं एक सौ दस बार देखने आया और बाकी एक सौ बीस रुपये दवाइयों और सुइयों की कीमत है।

हमीदा ने कहा—डाक्टर साहब मैं आपकी मशकूर हूं, कि आपने बड़ी लगन से इलाज किया। आपके रुपए आज ही आपके घर पहुंच जायेंगे। जरा वह दुकान से लौट आयें।

डाक्टर अच्छा-अच्छा कहकर मकान से निकला ही था कि अली दुकान से लौटा आ रहा था। डाक्टर ने अली को आते नहीं देखा। अली घर आकर सर पकड़ कर बैठ गया। हमीदा ने देखा तो पास आकर बोली—क्या बात है ? कहीं दर्द हो रहा है ?

अली—तुम्हें क्या, दर्द मेरे हो रहा है और तुम हो कि·····

हमीदा—आपका दर्द मेरा दर्द है। आखिर आप बीमारी से उठ कर इस किस्म की उखड़ी-उखड़ी सी बातें क्यों करने लगे हैं ?

—मेरी हर खुशी उखड़ चुकी है। इस बिमारी ने तो एक और नया दुख दे दिया है। ऐसे दुख को जिसे अब मौत ही दूर कर सकती है।

—ऐ है, खुदा न करे, ऐसी बातें करते जरा सोच तो लिया करो, सब घाव भर गए हैं। अल्लाह ने चाहा तो यह घाव भी भर जाएगा। और हां, अभी फसीह साहब आए थे—साढ़े चार सौ रुपए बताते थे तो मैंने कह दिया कि वली के अब्बा आयेंगे तो भिजवा दूंगी।

—मेरे बाद ही इस घर की दौलत वहां भिजवातीं, मेरी जिन्दगी में मेरा घर क्यों खाली किए देती हो।

हमीदा इन बातों से कुछ न समझी और बोली—आप भी कमाल करते हैं। डाक्टर साहब ने बड़ी लगन से इलाज किया है। अगर हजार भी मांगते तो देती। जान बच गई तो सब कुछ है।

—हां साहब, उसकी लगन ने ही तो यह गुल खिलाया है। अच्छा वली के हाथों रुपये भेज देना वरना बेचारे तुम्हारे डाक्टर का तुम्हारी तरफ से दिल मैला हो जाएगा !

—हां, यही मैं सोचती हूं।

रुपए भिजवा दिए गए। डाक्टर कभी-कभी देखने आता रहा मगर अली का नासूर अच्छा न हुआ और अब वह चारपाई पर लेटा हुआ डाक्टर और हमीदा के बारे में सोचता रहता। कभी उसे विचार आता कि जब वह स्वयं मर रहा है तो क्यों न हमीदा की भी जान ले ले ताकि यह बदनामी तो न हो। फिर उसे बच्चों का ख्याल आता कि अगर हमीदा मर गई तो बच्चों का क्या होगा। यह बच्चे जमाने की ठोकरें खाने के लायक अभी कहां हैं ? वह कुछ निर्णय न कर सका।

एक दिन दोपहर को रसोई से छुट्टी पाकर जब वह मियां के पास बैठी तो चिन्तामग्न हो कहने लगी—

—दूकान इतने दिनों से बन्द पड़ी है। जमा पूंजी भी सब खत्म हो गई। जेवर की भी नौबत आ पहुंची। आज एक गया है, कल दूसरा जायेगा। मेरा ख्याल है दुकान पर वली को भेज दिया करूं। कुछ तो घर में आयेगा। वरना वहां सामान तो खराब होगा ही और आमदनी भी बन्द होगी। आखिर होगा क्या।

—तुम्हारी जो मरजी में आए, करो। क्या होगा—यह तो तुम्हें कहना भी न चाहिए। मुझे मालूम है क्या होगा ?

—क्या होगा ? आखिर कुछ मुझे भी तो मालूम हो।

—तुम इस कदर बना न करो। सब कुछ जानती हो और मुझसे पूछती हो। पूछती हो तो सुन लो—मेरे मरने का तुम्हें इन्तजार है और मरने के बाद डा० फसीह से तुम्हारा निकाह हो जायेगा।

हमीदा जैसे चौंक गई—उसके प्रेम व प्रीत की हंसी उड़ रही थी। उसकी आज्ञाकारिता पर संदेह हो रहा था। उसकी असमत संदेहजनक हो चुकी थी। उसने मियां की जान की भी परवाह न करते हुए, उस दिन डाक्टर के मुंह पर थप्पड़ मारे थे। केवल और केवल असमत की स्वच्छता और शौहर के विश्वास को सुरक्षित रखने के लिए। मगर आज उसके सारे प्रयत्न, पवित्रता और भलाई रेत के महल की तरह ढा दी गई थी। उससे और तो कुछ हो न सका, केवल इतना कह सकी—

—कोई बात मुंह से निकालने से पहले आप सोच तो लिया करें। आज मेरी शादी को चौदह-पन्द्रह साल बीत चुके हैं। अगर आपको यकीन है कि पिछले दिन हमने इज्जत और असमत के साथ गुजारे हैं तो अब भी यकीन रखना चाहिए और फिर मैं ही कौनसी जवान हूं। जवान तो मेरी औलाद है। जरा सोच लिया होता कि आप क्या कह रहे हैं ?

—मैं सब कुछ जानता हूं। तुम तो खैर अभी जवान हो, मैंने तो दांत टूटी बुढ़ियों को गुमराह होते देखा है। मैंने भी जिन्दगी गुजारी है। दूकान पर बैठ कर हजार रंग देखता हूं। क्या अपने घर का रंग नहीं पहचान सकता ? मगर चुप हूं केवल वली और जाहिदा की वजह से। अगर कोई कदम उठाता हूं तो इन बेचारों की जिन्दगी खराब हो जाएगी।

—खुदा के लिए जरा सोच तो लीजिए। आप जजबात में क्या से क्या कहे जा रहे हैं। मुझे मरते वक्त कलमा न नसीब हो जो मैं झूठ बोलूं—मुझे तो आज तक डा० फसीह ने बहन के अलावा कोई दूसरा लफ्ज भी न कहा। हां वह डा० जैलानी है, जो पहले दिन पट्टी बांधने आया था, उसने जरूर कुछ बेतुकी बात कही थी। जब रात में मैं

उसे बुलाने गई। उस हरामजादे की नीयत जब मैंने बिगड़ी हुई देखी तो एक थप्पड़ जरूर लगाया था और फिर डा० फरीह को बुला लाई.....

—अच्छा अब तुम खुद फैसला करो। जब तुमने इतनी बात आज बताई है तो मैं क्या ऐतबार करूं कि तुम और भी जो बातें कहती हो वह सच हैं। यह बात तो ऐसी थी कि जब मैं बात करने लगा था तब ही बतातीं—मगर बताती वह है जो पाकबाज होती है। तुम तो दिल में चोर रखती हो इसीलिए यह बात इस वक्त जोश में आकर बताई है।

—वली बेटे की जान की कसम है। मैंने सिर्फ इसलिए यह बात न बताई थी कि आपको सुनकर बेकार अफसोस होगा और अगर गुस्सा आगया, डाक्टर से लड़ बैठे तो बात फैल जाएगी।

—एक बात दस तरीके से कही जा सकती है। तुम दलीलें दे सकती हो मगर पत्थर की लकीर तुम्हारे फूंकों से कभी मिट नहीं सकती। तुम मुझे धोखा देना चाहती हो जो हर धोखे को खूब समझता है। तुम बुद्धू हो और मुझे बुद्धू बनाने की कोशिश न करना और इस बात का ख्याल रखना कि जब तक मैं जिन्दा हूं तुम अपनी सफाई में एक बात भी बोलने की कोशिश मत करना। समझीं ?

दो

हमीदा एक अजीब सी उलझन में फंसी थी। उसके मियां की बदगुमानी उसे खाए जा रही थी। वह रात दिन उसी गम में घुलने लगी। एक तो मियां की बीमारी का गम, दूसरे उसके पवित्रता पर संदेह। इधर गहना-गुरिया बिकने लगा। विवश होकर उसने जाहिदा की तालीम बन्द कर दी। जाहिदा भी अब स्यानी हो गई थी। यह बात समझने लगी थी कि उसके अब्बा-अम्मा आपस में खिंचे-खिंचे रहते हैं। अब्बा चुप्पी साधे रहते हैं और मां दुखी रहती है।

एक दिन उसने अपने दिल में ठान लिया कि वह अपनी अम्मी से सब कुछ पूछ कर रहेगी। रात को जब उसके अब्बा सो गए और अम्मी अपने कमरे में सोने लगी तो जाहिदा ने अपनी अम्मी के गले में बाहें डालकर, रोनी सूरत बनाकर पूछा—

—अम्मी, क्या वजह है कुछ दिनों से आप अब्बा से और अब्बा आप से खिंचे-खिंचे रहते हैं।

—कुछ नहीं मेरी बच्ची, यूं ही तुम्हारे अब्बा का बीमारी की फिक्र मुझे खाये जा रही है।

—लेकिन अब्बा आपसे उस मीठी बोली में नहीं बोला करते जैसे वह बीमारी के पहले बोला करते थे।

—तुम्हारे अब्बा अपनी बीमारी की फिक्र में उदास रहते हैं। उन को हमेशा तुम दोनों भाई बहन का और मेरा गम खाये जा रहा है कि उनके न रहने पर हम सब का क्या होगा ?

—अब्बा यूं ही फिक्र कर रहे हैं। अल्ला मियां बड़ा कारसाज है। उनको आराम क्यों नहीं आता ? डाक्टर साहब तो रोजाना आते हैं और बड़ी अच्छी तरह इलाज कर रहे हैं। मेरे ख्याल से डा० फसीह के इलाज से अब्बा को तसल्ली नहीं है। क्यों न हम किसी दूसरे डाक्टर का इलाज बदल दें ?

लेकिन इलाज किस बूते पर बदलें बेटी। अपने पास के सारे धरोहर खत्म होते जा रहे हैं। अब तो यह नौबत आ रही है कि हम इलाज भी जारी नहीं रख सकते। हमारे पास तो अब इतना भी नहीं रहा कि एक नौकर का भार उठायें जो बाजार से दवा दारू, सौदा सल्फ ला दिया करे।

—अम्मी ! क्या मुझसे यह काम नहीं हो सकता ?

—तुम, माशाअल्ला स्यानी होती जा रही हो। मेरा दिल तो नहीं चाहता कि तुम्हारे कदम बाजार में निकलें लेकिन अल्ला को शायद यही मन्जूर है। अच्छा जो किस्मत में लिखा है वह भुगतना ही पड़ेगा।

—अम्मीजान, आप कोई फिक्र न करें। मैं इतनी समझदारी से हर सौदा मोल भाव करके बाजार से लाया करूंगी कि आप मुझे लड़की नहीं लड़का समझने लगेंगी।

—अच्छा बेटी, तुम अब जाकर अपने कमरे में सो रहो। काफी वक्त बीत गया है। मैं दिन भर की थकी मांदी हूं सारा दिन तुम्हारे अब्बा की देख भाल करती हूँ। रात को भी कई बार पानी पिलाने उठना ही पड़ता है। अब सोऊंगी बेटी, नहीं तो हमारी सेहत पर असर होगा।

हमीदा बेगम ने अपनी बेटी का मुंह चूमा और जाकर लेट रही। जाहिदा को अब बाजार में इधर-उधर फिरने की आजादी मिल गई थी। अब घर का कोई भी काम हो—उसे पूरा करना जाहिदा के जिम्मे था क्योंकि हमीदा बेगम को अपने मियां की देख-भाल से छुट्टी न मिलती थी।

एक दिन अदीब ने साहस करके जाहिदा के बुर्के का पल्ला पीछे से थाम कर छोड़ दिया। जाहिदा पीछे घूम पड़ी और कुछ अठलाए स्वर में बोली—मैं खाला अम्मा से शिकायत करूंगी।

अदीब डर गया कि कहीं सचमुच जाहिदा उसकी मां से शिकायत न कर दे। उसने तीन-चार दिन वहां खड़ा होना बन्द कर दिया। जाहिदा दोपहर को अदीब के घर पहुंची।

अदीब की अम्मा बोली—आज तो बड़े दिन पर आईं।

—जी हां खालाजान, घर के काम बहुत बढ़ गए हैं। अम्मी तो बाबा की तीमारदारी में लगी रहती हैं और सारे काम मुझे करने पड़ते हैं।

—अल्लाह अपना करम करे। किसी और डाक्टर का इलाज बदल लेना चाहिए था। किसी और की राय लेनी चाहिए थी।

—अजी अब पैसों का भी तो सवाल है। हजारों रुपया उठ चुका है, दुकान भी बिक गई है। और अम्मी जी की बालियां तो आपके पास ही रखी हैं। ऐसी हालत में ज्यादा पैसे के इलाज की हिम्मत नहीं होती। जी तो चाहता है कि अगर लाख भी खर्च हो तो अब्बा पर निछावर कर दूं। मगर मजबूरी बड़ी बुरी चीज है।

अदीब की अम्मी ने छालिया मुंह में डालते हुए कहा—हां, यह तो ठीक है अगर जान है तो जहान है। अभी तो तुम्हारी अम्मी के पास

काफी गहने हैं, वह किस दिन के लिए रख छोड़ा है। लगा दें इलाज पर।

जाहिदा के दिल में यह बात समा गई। उसने इरादा कर लिया कि वह अम्मी से जरूर कहेगी। मगर अदीब अपनी मां की बात सुनकर आपे से बाहर हो रहा था। वह जानता था कि उसकी मां सारे मोहल्ले के जेवर गिरवी रखकर अपना सन्दूक भरती रहती है। जाहिदा के उठने से पहले वह दरवाजे पर जा खड़ा हुआ। जब जाहिदा दरवाजे के पास आई तो अदीब ने उसे बेधड़क रोक लिया—जाहिदा घबरा गई।

अदीब झट बोल पड़ा—जाहिद, जरा ठहर जाओ, मेरी एक बात तो सुनती जाओ।

—उई अल्लाह ! अगर किसी ने देख लिया तो क्या कहेगा ?

—सुन लो जाहिदा। मैं तुम्हारे भले की बात कहना चाहता हूं।

—अच्छा, जल्दी-जल्दी जरा ब्यान कीजिए वह बात। ऐसा न हो कोई आजाए और यह नई बात मेरी अम्मी तक पहुंच जाए।

अदीब ने धीरे से कहा—मेरी अम्मी के कहने में आकर अपनी अम्मी को कभी यह राय न देना कि वह अपने गहने बेच दें।

—लेकिन इसके सिवा और कोई राह भी तो नहीं है। आप जानते हैं मेरे अब्बा सख्त बीमार हैं और हमारे घर की सारी पूंजी उनकी बीमारी पर खर्च हो चुकी है। आखिर हम जेवर गिरवी न रखें तो करें क्या ?

अदीब से रहा न गया। कहने लगा—अगर जेवर मेरी अम्मी के पास गिरवी रखा जाएगा तो वह जेवर आप ले न सकेंगी। मेरी अम्मी नफे के लालच में इतना सूद चढ़ा देती हैं कि जेवर सूद के रुपये में ही खत्म हो जाता है। आपको पता है, मेरी अम्मी ने आपकी बालियों के सिर्फ एक सौ पचहत्तर रुपए दिए और पचीस मुनाफे के रख लिए।

साथ में यह शर्त लगादी कि अगर तीन महीने में जेवर वापिस न लिया तो पचीस रुपए मुनाफे के और देने पड़ेंगे। आखिर यह मुनाफा क्या है? यह सूद है जो मुसलमानों में हराम है। अम्मा सारे मोहल्ले का खून चूसती हैं तो चूसा करें मगर तुम्हारे ऊपर उनका वार न चलने दूंगा।

—तो फिर इस हालात में हमें क्या करना चाहिए?

—इस बार अगर तुम घर से कोई जेवर लाओ तो मेरे पास लाना। मैं वह जेवर रखकर तुम्हें रुपये दे दूंगा। जेवर मेरे पास हिफाजत से रखा रहेगा और जिस वक्त चाहोगी ले जा सकोगी। जेवर रखे बिना रुपया ले जाओगी तो तुम्हारी मम्मी को शक होगा और यह एक तरीका है जिससे तुम मेरी अम्मी के पंजों से बच जाओगी।

इन बातों से जाहिदा पसीज गई। अदीब के एहसान तले दब गई। उसके दिल में आया, अदीब के पैरों पर सिर रखकर शुक्रिया अदा करे। मगर जल्दी, घबराहट और एक अनजान लज्जा के कारण वह केवल अच्छा कहकर द्वार से निकल गई।

दो-तीन दिन बाद जाहिदा को उसकी मां ने कड़े दिये और कहा—जाहिदा इनको तुम अपनी खाला अम्मा के पास ले जाओ। उनसे कहना कि हम लोगों की हालत पर तरस खाते हुए अपना मुनाफा अगर माफ कर दें तो अच्छा है। अगर वे माफ न कर तो उनसे कहना कि इसकी जो कीमत बनती हो वह दे दो, कड़े अब वापस नहीं चाहिए और देखो यह भी कह देना कि ये बारह तोले के हैं और इस वक्त सोना एक सौ बारह रुपये तोला है। तुम इसी भाव खरीद लो। रुपये ठीक से रखकर लाना। किसी को न कड़े दिखाना न रुपये। जाओ।

मां के इस नर्म स्वर की प्रतिक्रिया बेटी पर अत्यधिक हुई और और जाहिदा को अब अदीब की बातों पर पूरा विश्वास हो गया।

वह कड़े लेकर अदीब के घर पहुंची मगर अदीब स्कूल था। फिर भी उसने खाला से जिकर छेड़ी—

—खाला अम्मा, मुझे अम्मी ने भेजा है और पूछा है कि बारह तोले के कड़े हैं कितना दाम दोगी ?

अदीब की मां बोलीं—

—ऐ हे, बेचने की क्या जरूरत है, गिरवी रखदें, अल्ला देगा, पैसा होगा तो छुड़वा लेंगी।

—तो खाला अम्मा हमें पांच सौ की जरूरत है, इस पर मुनाफा कितना होगा और शर्त क्या होगी ?

—इस जमाने में पांच सौ रुपया देना मजाक नहीं बेटी। बारह तोले पर पांच सौ कौन देगा ? मैं तो चार सौ रुपये दे सकती हूं और पचीस रुपया महीना मुनाफा लूंगी। तुम्हारी अम्मी की मरजी क्या है पूछ आओ, नहीं तो और कहीं दिखा दो।

जाहिदा सोचने लगी बारह सौ से ऊपर की चीज पर खाला चार सौ रुपये का वायदा करती हैं और पचीस रुपये महीना मुनाफ़ा। जिसका मतलब यह हुआ कि साल दो साल में हम कड़े न छुड़ा सके, भरपाई न करी तो बारह तोले सोने के कड़े खाला हजम कर जायेंगी। उसने कोप दृष्टि से खाला की ओर देखा और खड़ी हो गई। अब जाहिदा को जाते देख अदीब की मां बोली—

—देख बेटा, मुझे जवाब जरा जल्दी देना वरना रुपये कहीं खत्म हो गए तो यह रहे सहे भी चले जायेंगे। वह तो मेरी बहन के बराबर है इसलिये हमदर्दी से कह रही हूं।

जाहिदा ने गुस्सा पीते हुए हूं, हां कहा और चली आई। अपनी अम्मी से कह दिया कि खाला कहीं गई हुई हैं, शाम को आयेंगी। यह

वहाना उसने अदीब के ही ऊपर किया था कि शाम को अदीब स्कूल से आजायेगा। वह बिना झिझके सारा माजरा उसे सुनाएंगी। न जाने क्यों वह अदीब को अपना सहायक और हमदर्द समझने लगी थी।

शाम को जब वह कड़े लेकर खाला के घर पहुंची तो अदीब खाना खा रहा था। उसने अदीब को कुछ अजीब सी नजरों से देखते हुए उसकी अम्मा से कहा—

—खाला अम्मा, अम्मी जी ने मना कर दिया है कि बारह तेरह सौ की चीज वह चार सौ में कैसे दे दें। उन्होंने कहा है कि बाजार में बिकवा देंगी। यह कहकर उसने अदीब की ओर निगाह फेरी अदीब समझ गया और खाना उसी तरह छोड़कर बाहर आगया।

इधर उसकी अम्मी कहने लगीं—

—हां, हां शौक से बाजार में बिकवाओ मगर उनसे कह देना कि अपनी बालियां वापिस लेनी हैं तो कल तक ढाई सौ रुपया मुनाफे सहित भेज दें वरना मैं बेचकर अपनी रकम ले लूंगी और उनका बालियों पर कोई हक नहीं रहेगा।

फिर वह बड़बड़ाने लगीं—बहुत हो गई मरव्वत। भलाई का तो वह जमाना ही नहीं रहा। कड़े बाजार जायेंगे, आधे रोल्डगोल्ड की बालियां मेरे पास आयेंगी। यह तो मेरी रहमदिली है, जरासी तकलीफ भी किसी की देखी नहीं जाती, झट से रुपये निकाल कर दे देती हूं।

जाहिदा भी एक-एक शब्द के उत्तर देना चाहती थी मगर बहुत कुछ सोच समझकर चुप हो रही और सब कुछ सहकर बाहर चली।

बाहर अदीब प्रतीक्षा में था। जाहिदा ने लजाते सकुचाते सब बातें उसे सुना दीं—अदीब कुछ देर सोचता रहा और फिर बोला—

—अच्छा, तुम जाकर अपनी अम्मी से कह देना, रुपये कल मिलेंगे, मैं सब इन्तजाम कर लूंगा।

जाहिदा को हैरत हुई, पूछ बैठी—आप कैसे इन्तजाम कर लेंगे।

अदीब ने भर नजर जाहिदा को देखा और प्रेम की स्वर लहरी गूंजी—तुम्हारे लिए मैं सब कुछ कर सकता हूं।

जाहिदा विचारों का प्रवाह लिए घर लौट आई। अपनी अम्मी से कह दिया कि रुपये कल मिल जायेंगे। और हमीदा संतुष्ट हो गई कि रुपये तो कल आजायेंगे।

हमीदा को बेकली थी कि उसके कड़े जा रहे हैं मगर मियां की बीमारी में वह सब कुछ लुटा देना चाहती थी। जान की चाह थी माल की नहीं।

अपने घर के सारे रहस्य अदीब जानता था। अपने मन की कुछ करने को ठान ली। रात के दो बजे। तिजोरी का ताला खोला। चाबी जहां से उठाई वहीं रखी। पांच बन्डल नोट अपने बस्ते में रख आया। द्वार खोले। बाहर से एक अध्धा ईंट का उठा लाया। तिजोरी पर जोर से दे मारा। जोर की आवाज हुई घर भर की आंख खुल गई। अब्बा की गरज सुनाई दी—कौन है ?

अदीब चारपाई से उठते हुए कह उठा—

—पकड़ो बाजी, कौन है पकड़ो बाजी। अब्बा जी इधर-उधर बिफरे शेर की तरह दौड़ आये। बिजली जलाई तो तिजोरी खुली पड़ी थी। अब्बा सीधे द्वार को फलांग गए। गली में चोर-चोर चिल्लाने लगे। मोहल्ले में जागरण हो गई। अगल-बगल के लोग द्वार पर आ गये। सब को वहीं छोड़ तिजोरी देखी-भाली—पांच हजार गायब थे।

बाहर आए, सब को बताया, पांच हजार गया। आज ही किसी की अमानत रखी थी और चोर ले गया। थाने गए, रपट लिखाई, साथ पुलिस लाए, इन्क्वारी हुई। बात जहां थी, वहीं रही। चोरी का पता उस रात क्या लगता आगे भी न लग सका।

अदीब खुश था कि वार सफल रहा। विचार में तरंगें उठीं—वह सुबह जाकर जाहिदा की अम्मी को रुपये देगा और कड़े लाएगा। वह कड़े इस समय जाहिदा को देगा जब जाहिदा और वह घुलमिल जायेंगे और वह कह देगी अदीब तुम मेरे हो—मैं तुम्हारी हूं। इसी उधेड़-बुन में उसे नींद आ गई।

सुबह को हमीदा रुपयों की राह देख रही थी। रहा न गया तो जाहिदा से पूछा—

—जाहिदा क्या बात है रुपये अभी तक नहीं आए।

—अम्मी! मुझे खालाजान ने कहा था कि रुपये सुबह भिजवा देंगी—

—लेकिन अब तो दोपहर होने को आया है और कोई आदमी नहीं आया।

—अम्मी! आप इतनी घबड़ा क्यों रही हैं।

—घबराने की बात है ही, तुम जानती हो रुपयों की कितनी जरूरत है?

—सच अम्मी—किसी ने सच कहा है गरज बावली होती है।

—खाला रुपयों का इन्तजाम करती होंगी। कल शायद नहीं था, इसीलिए तो कहा था कि कल भिजवा दूंगी।

—मुझे तो यूं लगता है जैसे वह रुपये नहीं भेजेगी।

—अच्छा अम्मी, एक घन्टे और राह देख लो। कोई न आया तो मैं फिर जाऊंगी। बार-बार जाने में इज्जत में फर्क आता है।

—अब अपनी इज्जत कहाँ बेटी! इन्सान की इज्जत दौलत से होती है, दौलत गई तो इज्जत कहाँ.....

यह बातें माँ बेटी में चल ही रही थीं कि द्वार पर ठोका लगा। जाहिदा दौड़ी, सामने अदीब खड़ा था।

क्या कहे, कैसे कहे घबराई उलटे पांव पीछे भागी कुछ बेचैनी, कुछ झिझक से—अम्मी अदीब आया, बस इतना कह सकी।

हमीदा ने अदीब को देखा—आओ बेटा, आओ, यहाँ बैठो।

—सलाम खालाजान।

—जीओ बटा। तुम्हारी अम्मी का क्या हाल है?

—आपकी दुआ और अल्लाह की दया है।

—कैसे रास्ता भूल गये बेटा?

—खालाजान, सुना है आपको रुपयों की बड़ी जरूरत है। आपने अपनी बालियां मेरे यहां गिरवी रख दी हैं।

—हां बेटा, तुमने ठीक सुना है।

—मुझे यह भी पता चला है कि आप अपने कड़े भी अम्मी के पास रखना चाहती हैं।

—हां सच है बेटा।

—खाला, जब से मैंने सुना है आप के यहां के हालात, मुझे बड़ा दुःख हुआ है।

—यह तुम्हारे अपनेपन का जजबा है बेटे। ऐसे सपूत कहां मिलते हैं?

5503

आपने खाला, मेरी अम्मी के पास बालियां गिरवी रख के बड़ी गलती की है। मैं अपनी मां को जानता हूं, वह आपकी बालियां कभी वापिस न करेंगी। वह तो उन्हें मुनाफे में खत्म हो जाएगा।

हमीदा ने एक सर्द आह भरी।

—बेटा, जब बुरे दिन आते हैं तो अकल भी जाती रहती है।

—हां, मास्टर जी भी समझा रहे थे, 'विनाश काले विपरीत बुद्धि।" अपनी अम्मी की चाल देख कर खालाजान, और आपकी हालत ने मुझे मजबूर किया कि आपके कड़ों पर रुपया किसी इमानदार आदमी से लूं। वह एक हजार तक देने को तैयार है और मजा यह है खाला कि वह आप से सूद भी न लेगा, और जब कभी भी आप चाहें बिना मुनाफे के कड़े भी वापिस ले सकती हैं।

हमीदा बड़ी खुश हुई। अदीब से प्रभावित हुई। ऐहसान के बोझ तले दबती हुई बोल पड़ी—बेटा, कौन भला मानुष है जो इतनी बड़ी रकम देकर सूद न लेगा। और सच पूछो तो कड़े, गये समझो। रकम की वापिसी की सूरत तो नजर नहीं आती। अच्छा तो यह है बेटा, उनसे खुलकर कह देते कि कड़े बेच के अपनी रकम ले लें।

—खालाजान, आप फिक्र क्यों करती हैं। इन्शाअल्ला सारे हालात ठीक हो जायेंगे। आप साल दो साल बाद जब चाहें रुपये दे दें। कड़े रखे रहेंगे।

—नहीं, नहीं बेटे, हम कभी जिक्र नहीं चलायेंगे उन कड़ों के। मगर मैं तुम्हारी ऐहसानमन्द हूं कि सारी उम्र इस ऐहसान का बदला नहीं चुका सकूंगी।

—अच्छा अब इजाजत दीजिये।

—नहीं, आओ बैठक में, चाय पी लो—तुमसे यहां क्या परदा है?

परदा तो गैर से होता है और तुमने तो वह काम किया है जो अपने नहीं कर सकते।

अदीब ने झिझकते हुए बैठक में पग रखा और जाहिदा लजाते हुए सामने आई। अदीब अली की ओर मुड़ा। हाल-चाल पूछने लगा।

यूं तो अदीब की आयु सत्तरह-अठारह से ज्यादा न थी, मगर अली को अदीब का इस तरह बुला लेना अच्छा न लगा। एक तो बीवी की ओर से संदेह उत्पन्न हो ही चुका था। अब उसे इस बात का विश्वास हो चला कि हमीदा लाज शर्म धो के पी गई है।

दोपहर को हमीदा ने अली से कहा—

—देखिये तो, बेचारे अदीब के दिल में हमारा कितना दर्द है। उसकी अम्मी ने कड़े का सिर्फ चार सौ में सौदा किया और पचीस रुपया महीना मुनाफा। अदीब को उनकी बात न भाई और उसने कहीं और से कड़े पर एक हजार रुपये ला दिए हैं।

अली तो जल भुन रहा ही था, बोल पड़ा—

—तुम तो इस वक्त पैसे के लिए कोठे पर भी बैठ सकती हो। अभी मैं मरा नहीं हूं और बिना पूछे तुमने एक नवजवान से पर्दा तोड़ दिया। घर में बुला लिया, इसके क्या माने हैं? जाहिदा जवान है, देखती नहीं तुम अन्धी हो।

हमीदा की भी त्यौरी चढ़ी—आप तो बीमारी से चिड़चिड़े हो गए हैं। हर बात आपको उलटी मालूम होती है। बिना समझे, बात मुंह से निकाल देते हैं। मैं जिस कदर नेक चलनी और आपकी हमदर्दी का दम भरती हूं उस कदर आप उतनी उल्टी सोचते हैं।

अच्छा, जो जी में आए, करो। मैं तो जब तक जिन्दा हूं, पड़े-पड़े सब कुछ देखना ही पड़ेगा।

—आपकी जिन्दगी के लिए ही तो सारे जतन किए जा रहे हैं। आज और कोई होती तो अपना गहना न जाने देती चाहे मियां घुलता रहता। बहरहाल आपको बड़े अस्पताल में दाखिल करा दूंगी, जो कुछ खर्च होगा देखा जाएगा।

—ठीक है, अब इस घर से भी बेदखल कर दो। मेरे पीछे मजे से गुलछर्रे उड़ाना।

—जो कुछ भी आप समझें। मैं तो अपना फर्ज पूरा कर दूंगी। मेरा फैसला अल्लाह करेगा।

दूसरे दिन अली को बड़े अस्पताल में भरती करवा दिया गया। दोनों समय हमीदा, जाहिदा और अदीब वहां जाया भी करते।

तीन

अदीब ने जाहिदा से पूछा—आज वली कहां गया है ?

—कहीं बाहर खेल रहा होगा।

—तुम भी बड़ी वह हो। हर वक्त खेल-कूद में लगाए रहती हो।

—मैं उसे खेल-कूद में क्यों लगाऊं। वह तो खुद ही खेल का प्यासा है।

—अभी तुम्हारी अम्मी अस्पताल से वापिस नहीं आईं ?

—आज कुछ देर हो गई है, आती होंगी। क्यों क्या बात है जो पूछ रहे हो ?

—कोई बात नहीं मैंने तो यूं ही पूछा था।

—आज कुछ खोए-खोए से क्यों हो ?

—नहीं तो। अदीब ने अपनी घबराहट छुपाई।

—आखिर मुझसे क्यों छुपाते हो ?

—तुमको पता है मैं तुम्हारे घर को अपना समझता हूं।

—इसमें इन्कार किसे है ?

—सच पूछो तो तुम्हें इसका ऐहसास नहीं।

—हम बेहद शुक्र गुजार हैं। आपके वक्त की मदद ने हम लोगों को बड़ी परेशानियों से उबार लिया है।

—मगर जाहिदा जो कुछ मैं पाना चाहता हूं, वह तो नहीं मिलता।

—क्या पाना चाहते हो ?

—कह दूं, बुरा तो न मानोगी ?

—मुझे क्यों बुरा लगने लगा ?

—मुझे.....मुझे तुम्हारी जरूरत है।

जाहिदा चौंक गई। चेहरे पर रंग-बिरंगे रंग आने लगे। वह तो पहले ही चूल्हे की गर्मी से गुलनार हुई थी, अब अदीब की बात ने लालाजार बना दिया। जोर-जोर दिल धड़कने लगा। होंठ सूख गये। पसीने की बूद झिलमिलाने लगीं।

अदीब ने कुछ ठहर कर फिर कहा—

—मेरा सवाल बुरा लगा है ? क्या तुम मेरी न बन सकोगी ? क्या मैं तुम्हें न पा सकूंगा ?

जाहिदा ने अपना मानसिक सन्तुलन स्थिर करके बड़ी दबी जबान में कहा—मैं आपकी हूं।

अदीब के कानों जैसे सीटियां बजने लगी हों। उसे ऐसा प्रतीत हुआ मानो किसी मेले में खड़ा है और दूर का कोई मधुर स्वर कानों से टकरा रहा है। अदीब ने प्रसन्नता के वेग में जाहिदा का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा—

—अब यह हाथ कभी एक दूसरे से अलग न होंगे।

दोनों के हृदय की गति तेज हो गई थी। इतने में वली आ गया और धड़कनें सामान्य हो गईं। अदीब वापिस चला आया।

अब अदीब के दिन में कई-कई चक्कर लगने लगे। आंखों ही आंखों में दिल की बातें होतीं। मिलने के वायदे होते। बेचैनियों का बयान होता। अब दोनों चढ़ती जवानी के मद में माते हुए प्रेम और प्रीत की उन राहों पर जा रहे थे जहां से वापिस लौटना कम से कम मानव स्वभाव और मानव-शक्ति के परे था।

इधर अली के सिर का आपरेशन हुआ। सरजन के कहे अनुसार आपरेशन सफल था। मगर घाव तो पहले जैसा ही रस रहा था। हां, दर्द बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की। अब घाव और बढ़ गया था। हरारत की जगह बोखार ने और बोखार की जगह तेज बोखार ने ले ली। जब हालत ज्यादा गिर गई तो हमीदा घर ले आई मगर अली ने उसी के तीसरे दिन संसार से विदा ले ली।

चालीसा बीत गया। तीन-चार माह बीत गए। वह हजार रुपये भी किनारे पर आ गये।

अब हमीदा को सोच हुई। बिना रोजगार के, बिना जीवन साथी के आने वाले दिन कैसे कटेंगे? वह कैसे जियेगी? जब यह सोचती तो ब्याह करने का मन चाह जाता।

अदीब आता रहता था। कड़े जाहिदा को दे दिए थे लेकिन उसने अपनी अम्मी के डर से गोदाम वाली कोठरी के एक कोने में उसे गाड़ दिया था।

हमीदा का हाथ जब खाली हो गया तो उसन अदीब को बुलाकर अपने झूमर दिए और समझाया—

—अदीब इसकी भी पूरी कीमत मिल सके तो अच्छा है। अब वापसी की बात न करना। अब कौन जाने हमारी जिन्दगी आगे कैसे बढ़ेगी।

—फिक्र न करें खाला जान। यह झूमर कितने का है ?

—यह मैंने छः तोले का बनवाया था। कुल लागत तो आठ सौ रुपये की है। मगर देता कौन है इतना? सब सोने की तोल देखते हैं। तुम इसको चार सौ रुपये तक दे देना।

अदीब घर आया। बस्ते में से रुपये निकाले और झूमर रखा। सात सौ रुपये लेकर हमीदा के पास पहुंच गया। जाते ही बोला—

—खाला जी की तकदीर बहुत अच्छी है। जिनसे पहले एक हजार रुपये लिये थे वह अपने बेटे की शादी कर रहे हैं। उन्हें झूमर की जरूरत थी, लागत समेत कीमत दे दी है। यह लीजिये, सात सौ रुपये।

हमीदा खुश हो गई—भइया, तकदीर कहाँ अच्छी है। हाँ, तुम अच्छे हो। तुम्हारी जगह अगर वली भी होता तो भी इतनी मदद न करता, इतनी हमदर्दी न रखता।

जाहिदा भी अदीब की कहानी सुन रही थी। मगर वह जानती थी कि अदीब ने अपने पास से रुपये लाकर दिया है और अम्मी को बहका रहे हैं।

दो दिन बाद अदीब ने झूमर भी जाहिदा के हाथ पर रख दिया। जाहिदा ने कहा भी कि वह यह सब कुछ क्यों कर रहा है ? अगर कहीं यह बातें माँ-बाप को मालूम हो गईं तो बड़ी मुसीबतों का सामना होगा।

अदीब कहता—जाहिदा, हर मुसीबत सह लूंगा, हर कयामत मोल लूंगा मगर—यह सब कुछ तुम्हारे लिये और अभी तो मैंने तुम्हारे लिये कुछ कुरबानी की नहीं है। जरा वक्त आने दो फिर देखना तुम्हारा अदीब क्या करता है।

विवश होकर जाहिदा को झमर भी कड़ों के साथ ही भूमि में दबा देना पड़ा।

अदीब का बराबर आना-जाना मुहल्ले वालों ने भी महसूस किया और शिकायत घर पर पहुंच गई। अदीब की माँ ने उसे आड़े हाथों लिया। कहा—खबरदार जो अब तू हमीदा के घर गया। वह तो अब यही धन्धा करेगी। सारा जेवर तो मियाँ पर लगा दिया। अब क्या रखा है जो तीन का पेट पालेगी। बस अब तो मुहल्ले वालों को बिगाड़ेगी। आवारा कहीं की!

यह सुनकर अदीब का खून खौल गया। तुरन्त उत्तर दिया—

—अम्मी, मैं उन्हें खाला कहता हूं और किसी तरह खाला से कम नहीं समझता। कल आप ही उनकी बेबसी पर आँसू बहाया करती थीं और आज अवारा कह रही हैं—उस औरत को जिसकी पाकीजगी पर फरिश्ते भी शुबहा नहीं कर सकते। मैंने आज तक अपने सिवा किसी दूसरे को उनकी ड्योढ़ी पर नहीं देखा। कोई अन्दर क्या जायेगा?

—मैं खूब जानता हूं अदीब, यह भूत सीधी तरह उतार दो वरना लातों से काम लेना पड़ेगा। अगर आगे कभी सुना कि तुम वहाँ गये थे तो मुझसे बुरा कोई न होगा।

—अम्मा, आप लातें नहीं तोपें लगायें, घर से निकाल दें, फिर भी मैं वहाँ जाना नहीं छोड़ सकता। अगर आप सख्ती से काम लेंगी तो मैं यह घर छोड़ दूंगा।

—हाँ, हाँ म तो पहले ही समझती थी। हमीदा का मौलवियों से गंडे-तावीज करना कुछ यूंही तो नहीं था। उसने जरूर तुझे उल्लू का नाखून खिलाया है। जिसने पाला पोसा, जवान किया, उसे छोड़ देगा

और जिससे दो दिन की दुआ सलाम है उससे लगी-लिपटी न छोड़ेगा। आज आने दे अपने बाप को। जाना तो दूर रहा अगर तू ने उन कमीनी का नाम भी लिया तो मैं समझूंगी।

—अच्छा अम्मा, आप अब्बा के आने से पहले दो बातों का फैसला कर लीजिये। मैं घर में रहूंगा तो वहाँ आने-जाने पर पाबन्दी न होगी, नहीं तो मैं यह घर छोड़ दूंगा।

अदीब की माँ बड़बड़ाती हुई चौके में चली गई।

चार

दूसरे दिन अदीब की माँ हमीदा के वहाँ पहुंची।

हमीदा—सलाम आपा।

अदीब की माँ—हूं, सलाम।

—बहुत दिनों बाद आज सूरत दिखाई। हालाँकि अगर देखा जाये तो मकानों के बीच एक दीवार ही है।

—हमीदा, बात यह है कि मैं औरत हूं। आज भी आने की वजह है वरना मैं आज भी न आती। मजबूरन आना पड़ा है।

—वह कौन सी बात है जो मजबूरन आपको यहाँ ले आई। कह डालिये जल्दी से।

—कहना क्या है बीबी। मेरा मतलब है तुम जो कुछ भी करो मगर, अदीब को यहाँ न आने दो। आज तो मैं नर्मी से कह रही हूं कल को अगर सख्ती की जरूरत पड़ी तो भी मुझे हिचकिचाहट न होगी।

—आ ", धौंस देना किसी धुनिये-जोलाहे को। आप अदीब का यहाँ आना मुनासिब नहीं समझतीं तो उसे मना कर द मगर मुझसे यह उम्मीद करें कि मैं मना कर दूंगी, यह गलत है।

जाहिदा भी वहीं खड़ी बातें सुन रही थी। उसने जब देखा कि अदीब का आना-जाना बन्द होने वाला है तो वह न जानें क्यों घबरा

गई। बीच हा में बोल पड़ी—खाला जान आखिर अदीब भाई के आने में हर्ज क्या है जो आप आपे से बाहर हैं ?

अदीब की माँ बरस पड़ीं—बस, बस, लड़की, जबान बन्द रख। मैं तुझसे बात नहीं कर रही हूं। दो दिन की छोकरी, गज भर की जबान। खबरदार जो आइन्दा मुझे जवाब दिया।

हमीदा से न रहा गया। कहने लगीं—मेरा ख्याल है कि आप हद से ज्यादा गिरी हुई हैं। आप मेरी बच्ची को यतीम समझ कर डाँट रही हैं।

अदीब की माँ हमीदा को लाल पीला होते देख धीरे से खिसक गईं। शाम को अपने मियाँ से सब बातें नमक मिर्च लगा कर सुना दी। खां साहब गर्म हो गये कि अदीब की हिम्मत इतनी हो गई और बिना सोचे समझे अदीब को मारना शुरू कर दिया।

अदीब मार सहते हुए कह पड़ा—देखिये अब्बा जी—मुझे गुस्ताखी पर मजबूर न कीजिये, वरना.....

वरना—शब्द सुन कर खां साहब का हाथ रुक गया और वह चढ़ी नजरों से अदीब की ओर घूरते हुए बोले—वरना क्या ? बोल। वरना क्या ?

अदीब का उत्तर था—बस, आज मेरा और आपका एकजा रहना खत्म। मैं अभी और इसी वक्त यहाँ से जा रहा हूं।

वह शीघ्रता से बाहर निकल गया। हमीदा के घर पहुंचा।

—बेटा अदीब, आज तुम्हारी अम्मा आई थीं। जो कुछ उन्होंने कहा अच्छा किया। हम गरीब और बेकस जिस कदर सुनने के काबिल थे, सुन लिया।

—खाला तो आप भी मुझे यहाँ आने से मना करना चाहती हैं।

—हाँ, हमीदा का सिर झुक गया। नजरें झुक गईं।

—खाला, ऐसा कभी नहीं हो सकता। मैंने तो वह घर आज छोड़ दिया है।

—तुम्हारा मतलब है, तुम अब घर नहीं जाओगे।

—जी हाँ, यह रख लें।

—यह क्या है ?

—ये रुपये हैं।

—कहाँ से आये इतने रुपये ?

—खाला जान, आप पूछ-ताछ न करें, बस चुपचाप इसे रख लें।

—मगर अदीब, मैं फिर पूछती हूं, ये आये कहाँ से ?

—खाला, अगर आप मेरा कुछ भी अपने ऊपर एहसान समझती हैं तो उन एहसानों का वास्ता दे कर कहता हूं कि इसे रखकर मेरे ऊपर एहसान करें।

हमीदा को विवश हो जाना पड़ा। वह रकम अपने सन्दूक में रख ली और अदीब चला गया।

शहर के एक छोटे-से होटल में ठहरा और घर नहीं गया। रात के नौ बज गये तो उसकी माँ फिर हमीदा के पास आई और रोते हुए कहने लगी—

—बहन, मेरा कसूर माफ कर दो। मुझे मेरे अदीब का पता बता दो।

हमीदा ने बता दिया कि शाम को वह वहाँ आया था। कह रहा था—न मैं घर जाऊँगा, न यहाँ रहूंगा, जहाँ सींग समायेंगे चला जाऊँगा।

मुझ से जो कसम चाहो ले लो बहन, मुझे पता बता कर नहीं गया।

अदीब की माँ बहुत फेर दे कर जानना चाहीं मगर जो सत्य था वह अटल था। अदीब का पता न लग सका।

खां साहब के कान भरे गये। उन्हें कुछ गुस्सा आ गया। थानेदार को कुछ देकर सिपाहियों को साथ लिया और हमीदा के घर आ धमके।

हमीदा ने जब द्वार खोले तो थानेदार ने माथे पर बल डालकर कहा—अरी, सच-सच बता दे कि अदीब कहाँ है? वरना अभी हवालात में बन्द कर दूंगा और वह मार लगाऊँगा कि हड्डियाँ गर्म हो जायेंगी।

हमीदा नें बड़े शान्ति से कहा—दरोगा जी, मेरा जो जवाब पहले था, सो अब भी है। मुझे बिल्कुल इल्म नहीं कि अदीब कहाँ है?

—अरे उल्लू की पट्ठी, सीधी तरह बता वरना चोटियाँ पकड़ कर वह घसीटा दूंगा कि नानी याद आ जायेगी।

हमीदा रोने लगी। मगर दरोगा जी दरोगा थे। कौन रोना-धोना सुनता है। सिपाहियों के साथ थाने ले चले।

अदीब आया तो जाहिदा ने सारा माजरा कह सुनाया। अदीब ने तसल्ली दी—तुम दखती रहो। इन्शाअल्ला अभी खाला जान को लेकर आता हूं। वह सीधा अपने एक दोस्त सईद के घर पहुंचा जिसके बाप वहीद पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट थे।

रात के एक बजे सिपाही ने अन्दर जाने से मना किया। अदीब ने इतने जोर-जोर से बात करनी शुरू की कि अन्दर सब लोगों की आँख खुल गई। सईद बाहर निकला तो देखा अदीब खड़ा है। अदीब सारा मामला बता ही रहा था कि वहीद साहब भी बाहर आ गये। सईद ने अपने पिता को बताया कि वह उसका सहपाठी है और मित्र भी है।

अदीब ने सारी कहानी डिप्टी साहब को सुनाई और बताया कि दारोगा जी जबरदस्ती जनाने में घुसकर खाला को थानें लाये हैं। डिप्टी साहब को बड़ा गुस्सा आया। अदीब को ले कर थाने चले।

दारोगा जी ने हमीदा को हवालात में बन्द कर रखा था और गालियाँ दे दें कर पूछताछ कर रहे थे। डिप्टी साहब अन्दर पहुँचे तो सारा थाना अटेनशन हो गया। डिप्टी साहब ने आते ही पूछा—

तुमने किस तरह, किस जुर्म में इस औरत को बन्द कर रखा है?

दारोगा के पास क्या जवाब हो सकता था? हजूर-हजूर करके रह गया। डिप्टी साहब ने दारोगा को फौरन मुअत्तल कर दिया। हमीदा से माफी मांगी और अदीब के बाप से कहा—अगर आप नें कभी नाजायज तरीका अख्तियार करनें की कोशिश की तो याद रखें इस हवालात में आप बन्द होंगे।

डिप्टी साहब ने अदीब की तरफ देखा तो अदीब विनय पूर्वक कहने लगा—मैं आपका बहुत शुक्रगुजार हूं। एक बात जानना चाहता हूं कि अगर मैं इनके (हमीदा की ओर संकेत करके) यहाँ रहूं तो कोई जुर्म तो नहीं है?

—नहीं तुम बालिग हो, जहाँ चाहो वहां रह सकते हो।

इसके बाद डिप्टी साहब चले गये। अदीब भी अपनी खाला को साथ लकर घर चला। खां साहब गर्दन झुकाये अदीब के पीछे-पीछे आ रहे थे। आधा रास्ता तय करने के बाद बोले—

—बेटा, अगर तुम अपनी खाला को इस कदर चाहते हो तो मेरी तरफ से इजाजत है, आया जाया करो, मगर अपना घर तो न छोड़ो, अपने माँ-बाप को परेशान तो न करो।

—अब्बा, अगर यही बात आप खाला जान की इतनी बदनामी करने से पहले सोच लेते तो कितना अच्छा होता। मगर अब जब बात इतनी आगे बढ़ गई तो घर रहने का अब सवाल ही नहीं है।

—मैं तुम्हारी खाला से माफी चाहता हूं। सचमुच मुझसे गलती हुई है।

पाँच

सवेरा होते ही अदीब की माँ हमीदा के यहाँ पहुंची। हमीदा आग सुलगा रही थी। जाहिदा आटा गूंध रही थी। वली और अदीब सो रहे थे। अदीब की माँ ने आते ही बड़े अदब से, बड़े प्यार से हमीदा को सलाम किया और पास में बैठकर कहने लगीं—

—बहन खुदा एक है, रसूल पर ईमान है, सुबह का वक्त है, जनाजे में बैठी हूं। अगर यकीन करो तो कहूं कि रात की बात पर मुझे बड़ा सदमा है। माफी मांगने आई हूं।

—आपा माफी तो भूल की होती है। जो काम समझ-बूझ कर किया जाय उसकी माफी कैसी? जब तुमने यह रास्ता अपना लिया, मेरी बेइज्जती कर चुकीं, सरे बाजार रुसवा करा लिया तो माफी माँगने लगीं।

—बहन हमीदा, मेरी जबान गूंग है। मैं कुछ नहीं कह सकती। मैं अब क्या कहूं! मैं खतावार तो हूं ही।

इसी बीच अदीब की आँख खुल गई। वह आँखें मलता हुआ बाहर आया। माँ को देखकर कहने लगा —

—अम्माजी, अब क्या कोई और नया दाँव फेंकने आई हो?

—बेटे, तू मेरी कोख से जन्मा है, मैंने तुझे अपना खून पिलाकर पाला है और आज तू ही मेरी चोटी खींच रहा है। तुझ मालूम है कि अगर मैंने दूध से छट नहीं दी तो तुझे अल्ला मियाँ भी माफ न करेंगे।

—आपका एहसान सर आँखों पर। लेकिन अम्मा यह कोई नई बात तो नहीं। हर एक अपनी आलाद को पालता है।

—अच्छा बेटा जो हुआ सो हुआ। मेरी अक्ल ठिकाने आ गई। चल अब घर चल। यह घर भी तेरा है और वह भी।

—अब तो अम्मी, मैं खाला जान की इजाजत के बिना जा ही नहीं सकता।

हमीदा ने चुप रहना ठीक न समझा। कहने लगीं—मेरी तरफ से अदीब मियाँ, तुम्हें पूरी इजाजत है। मैं किसी माँ से उसकी औलाद छीन कर कलेजे में घाव करना नहीं चाहती।

—हमीदा मुझे अली की कच्ची मौत का बड़ा अफसोस है।

—आपा, अल्लाह के काम में किसका दखल है!

फिर नाश्ता सामने रख कर कहनें लगीं—गरीबी में यही हाजिर है।

—बहुत है, बहुत है, मुझे ख्याल आता है, तू दुखिया है, आमदनी कोई नहीं। कैसे चलेगा?

—यह तो सही है आपा। मगर अभी दो-एक जेवर का सहारा है। सोचती हूं कोई काम शुरू करूं।

—हां, हां, ठीक है, लोगों की अंगुलियाँ तो नहीं उठेंगी।

अदीब मुस्करा पड़ा—अजी लोग तो एक तरफ रहें। पहले आपकी अंगुलियों से तो बचें।

—अदीब तू बड़ा मुंहफट होता जा रहा है। सोच-समझ कर बोला कर।

अदीब की माँ अदीब को घर ले आई। घर पहुंचकर अदीब ने अपनी माँ से कहा—अम्मा आपके दिल में गुस्सा न हो तो एक बात कहूं।

—कहो बेटा, तुम से गुस्सा किसको है ?

—अम्मां जी, मैं चाहता हूं, आप जाहिदा का.....

बस बस लड़के, जबान बन्द कर। रोटियों की मोहताज लड़का मेरी बहू नहीं बन सकती। अरे पागल, मैं तेरा ब्याह ऐसी जगह करूंगी जहाँ से बहू सोने में लदी आयेगी। दहेज इतना लायेगी कि घर में रखने की जगह नहीं मिलेगी।

—अम्माँ जी, आप बात फिर ऐसी कर रही हैं जो दिल में काँटे चुभाने वाली हो। शादी मेरी होगी। मैं चाहे पैसे वाली से करूँ चाहे भिखारिन से।

—बेटा, अगर तेरा यही इरादा है तो अपनी माँ के जनाजे पर बारात ले जाना।

अम्मी, आप कैसी बातें करती हैं ? मुझे मेरी मां ही अगर खुशियाँ न दे सकेगी तो और कौन देगा ? मैं अपनी खुशी अपनी माँ से, अपनी माँ को खुश रख कर चाहता हूं।

—मेरे चाँद, मैं तेरे पर कुरबान। तेरी खुशी के लिये मैं जान भी दे दूंगी मगर तू ऐसी बातें न कर जिससे खानदान की इज्जत में बट्टा लगे।

—खानदान की इज्जत इस बात से रहती है कि सूद पर रुपया चलाया जाये ?

—तेरे सिर पर भूत नाच रहा है। तेरी किस्मत तुझे तबाही की तरफ ले जा रही है।

इसी बीच खां साहब भी आ गये। बात उन तक भी पहुंची, मगर वह भी यह बात किसी तरह मानने को तैयार नहीं थे कि अदीब की शादी जाहिदा से कर दी जाये।

अन्त में अदीब ने फिर यही निश्चय सुनाया कि वह घर छोड़ देगा। तो खां साहब ने खुले शब्दों में कह दिया कि वह घर छोड़ सकता है लेकिन यह जिद नहीं मानी जा सकती।

अदीब वहां से हमीदा के घर आ कर चुपचाप बैठ गया। हमीदा ने चुप्पी की वजह पूछी तो अदीब ने केवल इतना कहा कि बात फिर बढ़ गई है। अब्बा ने घर में रखने से इनकार कर दिया और वह चला आया।

हमीदा ने कहा—अदीब, यह तो हर वक्त की जलन हो गई है। तुमने बेकार अपने दिल को परेशानियाँ लगा रखी हैं। तुम एक बात पर कायम हो जाओ, या तो वालिदैन को अपना लो क्योंकि तुम पर उनका पहला हक है। अगर उनसे किसी तरह निभनी मुशकिल है तो .....इसी घर को अपना लो।

मैं अब किसी हालत में वापस नहीं जाऊँगा। कल ही रमजान वाली दूकान खरीद कर उस पर बैठा करूंगा।

—यह और अच्छा ख्याल है। तुमने दसवीं का इम्तहान दिया है। इन्शाअल्ला पास हो जाओगे तो सरकारी नौकरी करना।

—खाला जान, भला सरकारी नौकरी में क्या मिलेगा? ऊँची दूकान फीका पकवान वाला हिसाब है। सरकारी नौकरी में मुशकिल से सौ रुपये मिलेंगे। इतने में तो एक आदमी की गुजर मुशकिल है।

—हां बेटा, यह तो ठीक है। अच्छा है, दूकान ही कर लो।

दूसरे ही दिन अदीब ने डेढ़ा हजार में दूकान ले ली। माल उसमें था ही। एक हजार का माल खरद कर और भर दिया। मौके की

दूकान थी, चल निकली और अदीब को दस-पन्द्रह की रोज बचत होने लगी।

इतवार के दिन दुकान बन्द रहती थी। दोपहर का समय था। बली और जाहिदा सो रहे थे। अदीब बाहर गया था, लौट कर आया तो हमीदा खाना लेकर पहुंची। अदीब ने कहा—

—खाला जान, मैं एक बात कहना चाहता हूं, मगर जबान पर रुक जाती है।

—बेटे, अब तुम्हें तकल्लुफ से काम नहीं लेना चाहिए। जब घर ही तुम्हारा है तो कहने में देर क्यों है ?

—आप शायद खफा न हो जायें।

—मैं और तुम से !

—अच्छा, तो वायदा कीजिये कि अगर वह काम न किया तो खफा न होंगी।

हमीदा को इन वाक्यों के अर्थ पर एक बार तो पसीना भी आ गया मगर वह फिर संभल कर बोली—

—कह डालो अदीब।

अदीब ने नजरें झुकाते हुए कहा—खाला जान, जाहिदा.....

हमीदा ने इतमिनान की सांस लिया। वह तो कुछ अपन ही बारे में समझ बैठी थी।

हमीदा ने मुस्करा कर कहा—तुम्हारे लिये जाहिदा ही क्या, दुनिया की हर चीज कुरबान कर सकती हूं। मगर सवाल फिर वही है।

—कौन सा सवाल खाला जान ?

—तुम्हारे वालिदैन की मरजी।

—खाला जान वालिदैन की तो आप जिक्र न करें। जब मैं अपने पैरों पर खड़ा हो चुका हूं तो फिर किसी की इजाजत कैसी ?

—तुम्हारी मरजी—जाहिदा तुम्हारी है।

अदीब मारे खुशी के खा न सका। वह फिर बोला—खाला जान, तो बस अगला इतवार.....

—जब चाहो बेटे, टालमटोल की क्या बात है। कुछ देने को तो है नहीं। जो थोड़े बहुत गहने थे वह भी बराबर हो गये अब तो मैं और अली तुम पर बोझ हैं।

—कैसी बातें करती हैं आप। अच्छा खाला आपके पास अगर आपके जेवर होते तो क्या आप जाहिदा को दे देतीं ?

—भला मुझे क्या इनकार था ! रखे ही उसके लिये थे।

अदीब अत्यधिक प्रसन्नता के मूड में जाहिदा, जाहिदा चिल्ला पड़ा। जाहिदा घबरा के उठ बैठी। पास आई, पूछ पड़ी—

—क्या बात है ?

—जरा मेरी अमानत तो ले आओ।

जाहिदा खिसियानी सी हो गई, द्विविधा में पड़ गई कि कहीं मां के सामने सारा भांडा न फूट जाये।

अदीब ने फिर कहा—तुम अम्मी के सामने न घबराओ और मेरी अमानत जो मैंने सौंपी थी तुम्हें, ले लाओ।

जाहिदा सहमी-सहमी कोठरी में गई। गहने निकाल लाई। अदीब ने हमीदा को वह गहने देते हुए कहा—

—लीजिये, दीजिये अपनी बटी की।

—अदीब, यह क्या पहेली है ? यह गहने तो बिक चुके थे।

—हां, मगर मेरे हाथों में बिके थे।

—तुम्हारे हाथों ?

—हां, उसी अमानत में से जिसे कुछ दिन आपने रखा और अब उसी से दुकान चल रही है।

—मगर यह तो बताओ, रुपया आया कहां से ?

—मेरा है, मेरे बाप-दादा का है।

—मैं कुछ समझी नहीं, जरा साफ-साफ कहो।

—क्या कहूं खाला जान, हमारे यहाँ चोरी हुई थी, वह चोर आपके सामने है। बस अब हील व हुज्जत की जरूरत नहीं। यह गहने अपनी बेटी को दे दें।

—लो भई, खुदा तुम्हें मुबारक करे।

जाहिदा एक अनजाने मनोभावना से प्रेरित होकर पानी-पानी हो गई। उल्टे पाँव भाग आई और रसोई में जा कर द्वार बन्द कर लिये।

ब्याह की तैयारी शुरू हो गई। सबसे पहले अदीब ने अब्बा को नवेद भेजा।

यह नवेद वालदैन की आत्मा पर तुषारपात था। कभी तो वह सोचते कि बिलकुल जायें ही नहीं। कभी सोचते, चलो हो जाने दो, शिरकत तो कर ही लें।

अदीब की माँ को बेहोशी के दौरे पड़ने लगे और खाँ साहब अजीब खींचातानी में फंस गये आखिर तय पाया कि वे शिरकत नहीं करेंगे।

इतवार को जाहिदा की शादी अदीब से हो गई और उसी दिन खां साहब अपनी बेगम को लेकर शहर से बाहर कहीं चले गये।

छः

जाहिदा की शादी के बाद हमीदा के कंधों से एक बोझ उतर गया। मगर इस ख्याल से वह दुखी रहने लगी कि दामाद की कमाई पर कैसे जिये ? उसने यही अच्छा समझा कि किसी से निकाह कर ले और अपना यह इरादा अपने मोहल्ले में दो-एक मिलने वालियों के कानों में डाल दिया ताकि रिश्ता मिलने में आसानी हो।

जब यह खबर कासिम हुसेन ने सुनी तो खुशी से उछल पड़ा। उसकी उम्र इस समय छब्बीस के लगभग थी। वह आज से आठ साल पहले अली के दुकान पर काम कर चुका था। दोपहर का खाना लेने घर भी आया करता था। हमीदा को देख कुछ ऐसी वैसी बेढब चाल भी चल चुका था जिससे उसकी नीयत का पता चल गया और हमीदा ने अली से कह कर कासिम को नौकरी से अलग करा दिया था।

अब कासिम ने ब्याह के लिये सिर-तोड़ कोशिश करनी शुरू की। अपने एक दोस्त की बीवी नूरी को पैगाम देकर हमीदा के घर भेजा और नूरी ने विवश होकर हमीदा से कहा—

—बहन हमीदा, एक पैगाम ले कर आई हूं।

हमीदा लजा गई मगर अपने समय को देखते हुए बोली—

—किसका है ?

—कासिम हुसेन का।

—कौन कासिम ?

—अरे वही कासिम हुसेन, बड़ी सड़क पर जिसकी साईकिलों की दूकान है ! चार-चार नौकर काम कर रहे हैं। शहर में सबसे अच्छा काम है। वह बचपन में तुम्हारे यहाँ काम भी तो कर चुके हैं।

हमीदा समझ गई। चुप हो रही। उसके मन में कासिम की वह पिछली बातें सर उठाने लगीं—बीबी जी, आज तो माशाअल्ला बड़ी अच्छी लग रही हो, कहीं किसी की नजर न लग जाये आपको।

यह वाक्य उसे बारबार याद आने लगा। हमीदा ने सोचा—रिश्ता तो अच्छा है। उसके दिल में मेरे लिये जगह है। मुझे उससे निकाह कर लेने में घाटा नहीं है।

नूरी के दोबारा पूछने पर वह चौंक-सी गई। कहने लगी—बहन कासिम को मैं अच्छी तरह जानती हूं। मुझे तो बाकी जिन्दगी के दिन काटने हैं। वह किसी के साथ बीत जायें। मुझे मंजूर है।

कासिम ने निकाह की तारीख तै करने के लिये अदीब से बात छेड़ी तो वह हैरान रह गया। मगर जब उसने सारी बातें अदीब को बताईं तो अदीब को यकीन-सा हो गया फिर भी उसने कहा कि बिना अपनी सास से पूछे वह कुछ कह नहीं सकता।

अदीब घर आया तो उसने पहले जाहिदा से कहा—तुम्हारी माँ ने कासिम से शादी करने का फैसला किया है, मगर वह तो जमाने भर का आवारा है।

जाहिदा भी यह सुनकर हैरान हो गई। कहने लगी मुझे तो इसकी खबर नहीं। अम्मी जान को ऐसे आदमी से तो वाकई शादी नहीं करनी

चाहिए। असल में वह इसलिए परेशान है कि दामाद के पैसों पर किस तरह जिन्दगी बितायें !

अदीब ने हिम्मत की और हमीदा के पास पहुंचा। कहा—खाला जान, आज मुझे कासिम हुसेन मिले थे।

हमीदा को झुरझुरी-सी आ गई—क्या कहते थे ?

—निकाह की तारीख तै करने को कह रहे थे। मगर मैंने कह दिया कि बिना पूछे कुछ नहीं कह सकता।

हमीदा ने सिर झुका लिया। कहने लगी—तुम उनसे जो तारीख मुनासिब समझो तै कर लो।

—मगर खालाजान, मुझे कुछ पूछने की इजाजत है ?

—हाँ, हाँ, कहो, मगर शायद तुम यही कहोगे कि तू ये शादी कर रही है। बुढ़ापे में पागल क्यों हो गई है। तेरा दिमाग क्यों खराब हो गया है ?

—मैं बेअदबी और गुस्ताखी तो नहीं कर सकता, मगर इतना जरूर पूछूंगा कि आप शादी करने पर इतना उतारू क्यों हैं ?

—अदीब मियाँ, अब तुमसे मेरा रिश्ता ऐसा बँध गया है कि सारी उम्र मैं नजरें नहीं उठा सकती। तुम्हारा यह एहसान ही किस कदर बड़ा होगा कि तुम मेरी जाहिदा को खुश रखो। म यह किस तरह सहूं कि मेरा और बली का खर्च भी तुम्हारे कंधे पर पड़े। मैं तो बली और अपना बोझ तुम्हारे सिर से उतारना चाहती हूं।

—खाला, मैं कभी यह सह नहीं सकता कि आप इतनी जरा-सी बात के लिये पूरे खानदान को खतरे में डाल दें। कासिम के बारे में आप इतना नहीं जानतीं जितना मैं जानता हूं। वह शहर का सबसे बड़ा बदमाश, आवारा, शराबी और अइयाश है। क्या आप इन

सब बातों को जानते हुए भी अपने आपको, अपने वली और अपनी बेटी को एक नई मुसीबत में डाल देने को तैयार हैं।

—तुम्हारा यह कहना ठीक है बेटा, मगर मुझे अपने आप पर पूरा भरोसा है कि मैं उसे सीधे रास्ते पर ले आऊंगी। जो आज शहर का मशहूर आवारा है वह कल नेक गृहस्त भी बन सकता है।

—मैं आपके सामने और क्या कह सकता हूं! अगर आपने ठान ही लिया है तो मैं आपका इरादा नहीं बदल सकता। मेरा काम आने वाले खतरे से चेतावनी देना है।

—मैं खुद भी इसे महसूस करती हूं। मगर जिस बात पर मैंने रजामन्दी दी है, तुम उसे नहीं समझ सकते और न मैं समझाना चाहती हूं।

—खैर, यह तो आप जानें।

—तुम तारीख तै कर लो और जल्दी ही तै कर लो।

अदीब वहाँ से उठ कर जाहिदा के पास पहुंचा, सारी बात सुनाई।

जाहिदा अजीब मुशकिल में थी। वह सोचती अगर अम्मी को मना कर दे तो शायद अदीब को बुरा मालूम हो कि फजूल खर्च बढ़ाने की वजह बन रही हूं और अगर अम्मी को न रोकूं तो कौन जाने कल अम्मी पर क्या-क्या मुशकिलें पड़ें?

इन सब बातों के होते हुए भी ब्याह की तारीख तै हुई और चौथे दिन निकाह के दो बोल पढ़ दिये गये।

कासिम खुश था कि उसने बचपन की बात का बदला ले लिया।

सुहाग रात में हमीदा पर जो बीती उससे आगे का अन्दाजा किया जा सकता है। जब हमीदा कासिम के घर पहुंची तो वहाँ सिर्फ नूरी थी। हमीदा को एक कमरे में बिठा कर वह भी चली गई।

थोड़ी देर बाद कासिम शराब के नशे में चूर, हाथ में बोतल और गिलास लिये कमरे में आया। हमीदा झुकी हुई बैठी थी।

कासिम कड़क कर बोला—उल्लू की पट्ठी, ऐसी दुल्हन बनी बैठा है जैसे चौदह बरस की कुंआरी हो। खड़ी हो, खड़ी, हमें शराब पिला इन सूखे हुए हाथों से जिनका रस अली पीकर कब्र में सो गया। हमसे यह सूखी आँखें मिला जिनकी शोखी और मस्ती अली ने खत्म कर दी। उठ खड़ी हो।

हमीदा का दिल धड़कने लगा। वह उठी। मियाँ को सलाम किया। बोतल हाथ में लेते हुए बोली—

—आप इतनी शराब न पिया करें।

यह कहना था कि कासिम बिगड़ गया।

— हरामजादी, हमें नसीहत करती है। तू मौलवी है या मौलाना। आखिर क्या है तू ? तू हमारी गुलाम है या हम तेरे। यह याद रख अगर गज भर की जबान चलाई तो काट कर टुकड़े-टुकड़े कर दूंगा। आज हमें सलाम करती है, कल की बात भूल गई जब कहा करती थी कि खाना लेने आया करो तो हमको सलाम किया करो। नवाब-जादी यह भूल गई कि कल तू भी सलाम करने के लिए मजबूर हो सकती है।

हमीदा क्या बोल सकती थी ? चुप रही।

कासिम फिर बोला—बड़ी बी, हम से बात करो। मुर्दे से शादी करनी होती तो कब्रिस्तान में जाते। क्या मुंह में जबान नहीं है ?

हमीदा ने थोड़ी-बहुत बात शुरू की। वह हर बात पर गरजता और बरसता रहा। इसी न्यामत में पहली रात बीती। दूसरे दिन सवेरे जब हमीदा ने घर पर एक नजर डाली तो वहाँ न बरतन थे, न

घर गृहस्ती का कोई सामान, सिर्फ एक चारपाई थी, एक लोटा था जो टूटे हुए मैले घड़े के पास रखा था। कासिम अभी सो रहा था और हमीदा उसके उठने की राह देख रही थी। जब वह सोकर उठा तो हमीदा ने कहा—आप खाना यहाँ नहीं पकवाते ?

कासिम का जवाब था—हूं, तुझे आते ही रोटी की फिक्र हो गई। मगर मेरी जान, यहाँ तो बंजारे की जिन्दगी है। कभी मुश्तरी बाई के कोठे पर खा लिया। कभी जोहरा बाई के कमरे में। यह घर तो सिर्फ इसलिए है कि तुझ जैसी आये और फड़फड़ा कर दम तोड़े। तुझसे पहले इस घर में तीन औरतें अल्लाह मियाँ को प्यारी हो चुकी हैं और अब चौथी तू है। मगर तेरा क्या है, आखिरी उम्र है, बहुत तकलीफ न उठानी पड़ेगी, जल्दी ही खलासी हो जायेगी।

हमीदा मियाँ का मुंह धुलाने के लिए पानी लेने बढ़ी तो देखा घड़ा खाली था। वह फिर बोली—

—यहाँ तो पानी भी नहीं है, आप मुंह कैसे धोयेंगे ?

—अरी पगली, शेरों के मुंह कब धुलते हैं। अगर तुझे पानी की जरूरत हो तो सड़क के नल से पानी भर लाया कर और खाने के लिये अपने के पास कुछ नहीं है। अब तेरी मरजी है चाहे यहाँ रह चाहे वापस चली जा। हाँ, कभी-कभी रात बिताने की इजाजत है।

हमीदा के आंसू फूट पड़े और कासिम के पैरों पर गिरती हुई बोली—

—आखिर किस जुर्म की सजा मुझे देना चाहते हो। मैंने तो शादी इसलिये की थी कि मैं समझती थी, तुम्हें मुझसे मुहब्बत है, मगर...

—मगर क्या ? मैंने तुझसे कब आँख मटका किया था ? किस दिन प्यार का खत लिखा था ? मैंने शादी तो सिर्फ इस बात का बदला

लेने के लिये की कि जब मैंने तेरे हुस्न की बड़ाई की थी तो तूने मुझे नौकरी से अलग करवा दिया था। तू यह समझती थी कि रोटी ही न मिलेगी। मगर तेरा यह खयाल गलत निकला। आज तू मेरे रहमो-करम पर है। लेकिन याद रख मैं रहमो-करम जानता ही नहीं, इसके मानी पर कभी सोचा ही नहीं। अब आखिरी फैसला यह कि तुझे सुबह की चाय और दोनों वक्त का खाना होटल से आया करेगा। एक हफ्ते में मेरा मन सुझसे भर जायेगा फिर तेरी छुट्टी है। चाहे दामाद के घर रहना चाहे जहाँ रहना। मगर यहाँ खाने-पीने का इन्तजाम न होगा। यह भी तेरे साथ स्पेशल रियायत है, वरना इस घर से कोई जिन्दा नहीं गया। सबके जनाजे निकले हैं।

हमीदा के आंसू बस में न थे। वह केवल रोती थी, कुछ कहना नहीं चाहती थी। कासिम के व्यवहार का ढंग और उसकी प्रवृत्ति ही कुछ ऐसी थी जिससे यह पता लग गया था कि कोई बात उस पर असर नहीं करेगी।

कासिम ने चलते हुए कहा—अगर रात को मेरे आने पर भी रोती हुई मिली तो तेरी दोनों आँखें फोड़ दूंगा। मैं जिस वक्त भी आऊं हंसता हुआ पाऊं।

कासिम के जाने के कुछ देर बाद जाहिदा और वली आये तो देखा कि अम्मी की आँखें रोने के कारण सूजी हैं। अदीब ने पहली नजर में भांप लिया कि मामला जरूर कुछ खराब है मगर शर्म और मसलहत के मारे कुछ बोल न सका।

हमीदा ने बच्चों को देखा तो उसका कलेजा फटने लगा? मगर बड़ी मुशकिल से आँसू पिये—दो-तीन घंटे बाद लोग चले गये तो हमीदा फूट-फूट कर रोने लगी।

वह रोती रही और उसके आँसुओं का बाढ़ न रुक सका। रात को कासिम आया तो मजबूरन मुस्कराकर उसका स्वागत किया। वह

आज भी उसी तरह मदहोश था। उसी तरह गाली गुफ्ता और बेतुकी बातों का तूफान बाँधे था।

अभी पाँच दिन ही बीते थे कि कासिम ने अलटीमेटम दे दिया—परसों यहाँ एक और कबूतरी आने वाली है। तो तुम अपना बोरिया-बिस्तर कल तक जरूर गोल कर दो।

हमीदा पाँचवें दिन अपने घर चली आई और ढके-छुपे शब्दों में किसी न किसी तरह कासिम के व्यवहार का ब्यौरा अदीब को दे दिया और यह भी कहा—अगर तलाक मिल जाये तो मैं एक अजाब से बच जाऊं।

अदीब को ये बातें सुन कर दिल में चोट लगी। वह कासिम के पास पहुंचा और उससे कहा कि वह तलाक दे दे।

कासिम ने जवाब दिया—बरखुरदार कैसी बातें करते हो? तलाक देना कोई शरीफों का काम थोड़ा ही है। यहाँ तो आज तक न किसी को तलाक दी है न आगे देने का इरादा है। यही क्या कम है कि मैंने वापस जाने की इजाजत दे दी। वरना मैं चाहता तो घर ही में कैद रखता, किसी से मिलने न देता और न उसकी आवाज ही कोई सुनता।

अदीब ने जब देखा कि यह तलाक देना नहीं चाहता तो अदालती कारवाई की धमकी दी।

कासिम यह सुन कर हंसा और कहने लगा—भइया अदीब, जब तुम अदालत और कचहरी के लिये तैयार हो तो ऐसा क्यों नहीं करते कि एक हजार रुपया मुझे दे दो और तलाक ले लो।

अदीब सब कुछ समझ गया। चुपचाप घर चला आया। जाहिदा को सारी बातें बताईं। वह बेचारी रोने लगी। कहा—कुछ भी हो,

आप अम्मीजान को इस मुसीबत से छुटकारा दिला द मैं आपके पाँव पड़ती हूँ।

अदीब ने हमीदा से कुछ नहीं कहा और चुपके से हजार रुपये का इन्तजाम करके कासिम के पास पहुंचा। उसे कचहरी ले गया, सरकारी कागज पर तलाक लिखाई और रुपया उसके हवाले किया। घर पहुंच कर तलाक नामा हमीदा के सामने रख दिया। हमीदा की आँखों से आँसुओं की धारा बह चली, हिचकी बँध गई।

अदीब ने समझाया बुझाया और वह आँसू पीने लगी।

अब हमीदा ने शादी का इरादा तो बिलकुल छोड़ दिया मगर वह इस फिक्र में जरूर रही कि कोई ऐसा काम शुरू करे जिससे उसके गुजारे का सहारा हो जाये।

सात

अदीब को दुकान पर खबर मिली कि उसकी माँ चल बसी। वह बेताब होकर घर भागा। खाँ साहब लाश के पास बैठे रो रहे थे और उसकी माँ दुनिया के तमाम झगड़ों से छुटकारा पाकर चुपचाप पड़ी थी।

अदीब की हिचकियाँ बँध गईं। वह खां साहब से लिपट कर रोने लगा। वह बार-बार अपनी माँ का मुंह खोलकर देखता और दहाड़ें मार-मार कर रोता। मगर उसकी माँ तो इन सब बातों से बेफिक्र हो चुकी थी। जब सब रो-धो चुके और दिलों के मैल आँसूओं में बह गया तो नहला धुला कर दफनाने चले।

जाहिदा और हमीदा भी आ गईं थी। घर के कामकाज को संभाल लिया था।

खाँ साहब ने कहा—अदीब अब तेरे सिवा इस बदनसीब का कोई नहीं है। जाहिदा मेरी बहू है। यह घर इसका है और यह सब यहीं रहेंगे। हमीदा और वली भी यहीं रहेंगे। उस मकान को खाली कर दो। सब सामान यहीं ले आओ।

दो तीन राज बाद सब लोग खाँ साहब के पास आ गये और घर की चहल-पहल में खाँ साहब अपने गम बहुत जल्द भूल गये।

घर के खाना पकाने का सारा काम हमीदा करती थी और बहुत खुश थी कि अदीब अपने घर आ गया। शायद यही वजह थी कि उसके चेहरे पर चिन्ता की जो लकीर कासिम ने छोड़ी था अब वह मन्द-मन्द मुसकान में परिवर्तित हो चुकी थी।

खां साहब के दिल में हमीदा दिर-ब-दिन घर करती जा रही थी। दोनों को एकांत में बात करने के अवसर भी मिल रहे थे। खां साहब हंसी मजाक भी करते जो हमीदा को बहुत कुछ सोचने पर विवश कर देते।

एक दिन खाँ साहब ने हमीदा से कह ही दिया—कब तक जिन्दगी के दिन यूं ही गुजारोगी हमीदा! एक घर में सब एक हो जायँ तो अच्छा है।

हमीदा को विश्वास न हुआ। लेकिन खां साहब के बढ़ते हुए पग आगे ही बढ़ते गये। मगर अब दिक्कत यह थी कि वह आपस में एक किस तरह हों? न तो हमीदा अपनी बेटी से यह बात कह सकती थी और न खाँ साहब वली से मुंह खोल सकते थे।

दोनों परेशान थे कि क्या करें? बेचैन-से भी थे कि किस तरह एक हो जायें। आखिर खां साहब ने अपने एक पुराने दोस्त हाशिम को इस ड्रामे का हीरो बनाया और हाशिम ने अदीब से बातचीत शुरू कर दी।

—भई मैं तो तुम्हारे बाप को मजबूर कर रहा हूं कि तुम्हारी सास से निकाह कर लें।

अदीब ने कहा—कासिम चचा, भला आप कैसी बातें करते हैं। अगर अब्बा तैयार भी हो जायें तो क्या यह जरूरी है कि हमारी सास

भी रजामन्द हो जाएं ? उन्हें पिछली बार कुछ ऐसा कड़वा तजरबा हुआ है कि शायद अब निकाह की बात उनके दिमाग में आये भी न।

हाशिम फिर कहने लगा—मियां बरखुरदार, कहां की मिसाल कहां देते हो ? क्या तुम्हें अपने अब्बा से उम्मीद है कि वह कासिम की सी हरकत करेंगे ?

अदीब को इस दलील पर चुप हो जाना पड़ा। अब समस्या यह थी कि यह मामला किस तरह तै पाये। हाशिम ने अपनी बीबी को भेज कर यह समस्या हल कर दी और हमीदा का निकाह अदीब के अब्बा के साथ हो गया।

दोनों बहुत खुश दिखाई देते। अदीब और जाहिदा भी चाहे जितना खुश होते कम था। सारा घर एक हो चुका था। अब हमीदा को न वली की चिन्ता थी और न दामाद के एहसानों का बोझ था। जीवन बड़े मजे में बीत रहा था। मगर अभी पूरा साल भी न बीता था कि शहर में हैजे की बीमारी फैली और खां साहब उसके शिकार हो गये।

खाँ साहब के मरने का घर भर को शोक हुआ, मगर एक चीज झगड़े का कारण बन गई और वह चीज खां साहब की दौलत थी। दौलत के बंटवारे की समस्या बड़ी टेढ़ी थी। हमीदा का खयाल था कि खां साहब के धन के चार हिस्से किये जाएं। तीन हिस्सों में वह स्वयं वली और जाहिदा भागीदार हों और चौथा हिस्सा अदीब का हो। मगर अदीब कहता था, एक हमीदा को दिया जाये और तीन उसे दिया जाये।

यह समस्या इस तरह टेढ़ी न होती मगर इधर-उधर के मर्द और औरतों ने हमीदा और अदीब को भड़काना शुरू किया। औरतें

हमीदा से कहतीं कि अगर तुम तीन हिस्सों में रियायत से काम लोगी तो कल फिर दामाद की कमाई पर जीवन बिताना पड़ेगा और हो सकता है, दामाद की नजरें यह सोच कर बदल जायें कि इसने अपना हिस्सा तो खत्म कर दिया है और अब मेरे पैसों पर दाँत गड़ाये बैठी है। इधर अदीब के मित्र यह कहते थे कि देखना वह तीन-तीन शादियाँ कर चुकी है। अगर आज तुमने अपना समझ कर तीन हिस्से दे दिये तो कल वह किसी और से कर लेगी और तुम उल्लू के उल्लू रह जाओगे।

इस समस्या ने इतना उलझा रूप धारण किया कि हमीदा और अदीब में अच्छी खासी चल पड़ी, जाहिदा बेचारी चुप थी क्योंकि उसके लिये दोनों बराबर थे। एक जमाना था कि इसी अदीब ने अपने बाप का रुपया चुराकर हमीदा को दिया था। एक हजार रुपया देकर कासिम से छुटकारा दिलाया था और आज एक-एक पैसे के बंटवारे में इतनी कड़ाई हो रही थी। कल तक हमीदा अपने दामाद पर सब कुछ निछावर करने को तैयार थी और आज अपना हक लेने के लिये पूरी तरह अड़ी थी। जब समस्या किसी तरह न सुलझी और पेचीदगी और बढ़ गई तो मजबूरन मोहल्ले वालों ने फैसला करा दिया और दोनों को आधे-आधे का हिस्सेदार बनाकर रुपये का बंटवारा कर दिया गया।

रुपये के बंटवारे के बाद हमीदा अपने मकान में वापस आ गई और अदीब व जाहिदा को वहीं छोड़ दिया। जाहिदा को बहुत रंज था। रुपये के कारण अच्छा भला मिलाप खराब हो गया।

अब अदीब हमीदा के घर न जाता और न हमीदा ही आती। जाहिदा मां से कभी-कभी मिल आया करती।

हमीदा ने उस रुपये से साइकिल रिकशायें ले लीं। एक मुंशी नौकर रख लिया और काम चलने लगा। आमदनी भी अच्छी होने लगी। बेफिक्री और खुशहाली ने हमीदा के दिल में फिर गुदगुदाना

शुरू किया। वह अब शादी के लिए तैयार न थी लेकिन इन गुदगुदियों को शान्त करने की चिन्ता अवश्य थी।

हमीदा का मुंशी एक नव उम्र लड़का था जिसने आठवें दर्जे से पढ़ना छोड़ दिया था। हमीदा ने उसी पर दांत गड़ा दिये और प्रेम की फुलवारी सजने संवरने लगी।

अब मुनीर केवल मुंशी न था, मालिक था। जितना चाहता था खर्च करता था। मुनीर को शराब की आदत पड़ी और अब तो पीने के लिये पांचों अंगुलियाँ घी में थीं। वह अब वहीं हमीदा के घर रहने लगा। जब हमीदा ने उसे पीने से रोका तो उसने चले जाने की धमकी दी जो हमीदा सहन न कर सकती थी। मुनीर ने हमीदा को भी शराबी बना दिया। पहले पहल हमीदा ने पी तो ऐसा मालूम हुआ मतवाली जवानी लौट आई है। फिर तो वह रोज ही पीने लगी।

मुनीर की आंखें जाहिदा पर भी थीं। कभी-कभी छेड़छाड़ भी की थी, मगर जाहिदा तरह देती रही। अदीब इन बातों को नहीं जानता था। अगर अदीब को मालूम हो जाता तो जाहिदा का मां से मिलना बिलकुल ही बन्द हो जाता।

एक दिन हमीदा कहीं बाहर थी और मुनीर घर था। वली स्कूल गया था। जाहिदा माँ से मिलने आई थी। मुनीर पर शैतान सवार हो गया। उसने बिना सोचे-समझे जाहिदा को परेशान करना शुरू किया। इधर-उधर टटोलने लगा, मसलने लगा। जाहिदा का भाग्य अच्छा था जो वली ने द्वार पर दस्तक दिये और मुनीर ने एक सर्द आह भर कर जाहिदा का छोड़ दिया।

जाहिदा सोच रही थी कि मुनीर जैसे बदमाश और पाजी को न जाने क्यों अम्मी ने घर में रखा है। वह अजीब उलझन में थी कि शिकायत करे या न करे। करे भी तो किससे, करे अगर वह अपने

मियाँ से शिकायत करती है तो झगड़ा बढ़ जायेगा और जाहिदा का आना-जाना बन्द हो जायेगा। अगर वह अपनी अम्मी से शिकायत करती है तो उन्हें यकीन न आयेगा। मुनीर की हिम्मत बढ़ गई है। अन्त में उसने मुनासिब समझा कि चुप रहना ही अच्छा है और अगर किसी दिन अम्मी घर न हों तो वह वापस लौट जाया करे।

हमीदा की अइयाशी कब तक ढकी छुपी रहती। धीरे-धीरे लोगों को खबर होने लगी और मोहल्ले वाले हमीदा को मोहल्ला छोड़ने पर मजबूर कर दिये। हमीदा शहर से बाहर के मकान में चली गई। मुनीर साथ था। वली अपनी तालीम की वजह से अपनी बहन जाहिदा के पास चला गया।

ये बातें जब अदीब को मालूम हुईं तो उसे बहुत दुःख हुआ। उसने जाहिदा को वहाँ मिलने जाने से रोक दिया क्योंकि इसमें जाहिदा की बदनामी का खतरा था। जाहिदा ने कहना मान लिया। बात आई, गई, हो गई।

कुछ ही महीनों बाद हमीदा की सारी पूँजी हवा हो गई। शराब और शराब के नशे में अइयाशी ने उसे तोड़ दिया था। हरारत रहने लगी थी। मगर मुनीर की मुहब्बत उसी तरह थी।

मुनीर ने हमीदा से साफ-साफ कहा कि जब पैसा नहीं है तो खर्च कहाँ से चलेगा। मैं अब जाना चाहता हूं ताकि कहीं कोई काम ढूं ढूं।

हमीदा उसे छोड़ने के लिये तैयार नहीं थी। इसलिये वह पेशा कराने पर राजी हो गई। मुनीर गाहक लाता और इससे घर का खर्च चलता। अब जाहिदा का आना बिलकुल बन्द हो गया क्योंकि हमीदा की असमत फरोशी की चर्चा सारे शहर में बच्चों और बड़ों की जबान पर था।

हमीदा की सेहत गिरती गई और वह दिन भी आया जब चारपाई से लग गई।

मुनीर ने अस्पताल में दाखिल करवा दिया ताकि उसे छुट्टी मिले और चार-पाँच दिन बाद अदीब के यहां खबर करा दी कि हमीदा अस्पताल में मौत से लड़ रही है।

अदीब की आँखों से आँसुओं की धार चली। वह सोच रहा था कि इतनी अच्छी चालचलन वाली हमीदा ने दुनिया की किस कदर ठोकरें खाईं और किस मंजिल तक पहुंच गई। उसने तुरन्त दूकान बन्द की और घर आया। वली और जाहिदा को लेकर अस्पताल पहुंचा। बिस्तर का नम्बर मालूम किया, पास गया तो देखा हमीदा एक पलंग पर चेतनाहीन पड़ी हुई है, ज्वर से शरीर तप रहा है।

जाहिदा और वली अपनी अम्मी से लिपट गये। चीखें मार-मार कर रोने लगे। मगर हमीदा को इतना होश न था कि वह अपने कलेजे के टुकड़ों को अपने कलेजे से लगाकर दिलासा दे सके। अदीब की आँखें भी नम थीं।

इस समय हमीदा का कोई गुनाह अदीब की निगाह में न था। उसके हृदय में सहानुभूति थी। हमीदा के लिये खाला का प्यार था। अस्पताल वालों से इजाजत ले ली और हमीदा को घर ले आये।

हमीदा को घर लाकर तीमारदारी और इलाज में कोई कसर न छोड़ी। डाक्टरों ने बताया कि रोगी टी०बी० की आखिरी सीढ़ी पर है। दवा के बजाय दुआ की जरूरत है। जाहिदा और वली इसी फिक्र में थे कि माँ को किसी तरह होश आ जाये तो दो-चार बातें कर लें। मगर हालत गिरती ही गई। चौथे दिन हमीदा ने आँखें खोलीं और सारा घर उस पर झुक गया। लेकिन हमीदा ने किसी की ओर भी प्रेम भरी दृष्टि न डाली। धीमी, बड़ी धीमी आवाज में कहा—

—मुनीर कहाँ है, उसे बुलाओ।

अदीब ने हमीदा की अन्तिम इच्छा पूर्ति के लिये मुनीर की खोज की और उसे घर ले आया। हमीदा आँखें बंद किये पड़ी थी। अदीब ने कंधा हिलाते हुए कहा—

—खाला, मुनीर आ गया।

हमीदा ने आँखें खोल दीं और अपने कमजोर हाथ उसकी ओर बढ़ा दिये। मगर मुनीर को वह अपने अंकवार में ले कर गले न लगा सकी। उसके हाथ नीचे गिर गये और प्राण का पंछी उड़ गया।

आठ

मुनीर रो-रो कर थक गया। यह जानता था कि वह बदनाम है। अपनी बदनामी धोने के लिये अदीब से उसने हमीदा की एक कहानी सुनानी शुरू की।

—मैंने एक बार कहा कि लोग मुझे बदनाम कर रहे हैं, आपकी भी बदनामी हो रही है। मेरा इरादा है कि मैं कहीं और नौकरी कर लूं।

मेरी इस बात पर मरहूमा को बहुत गुस्सा आया। वह कहने लगीं—

—जब तक पाकदामनी, पाकीजगी हमारे दरमियान कायम है, कोई वजह नहीं तुम यहाँ से नौकरी छोड़कर जाओ।

मे चुप हो गया और काम करता रहा। इसी बीच उन्हें नजला हुआ, सरदी का असर हो गया। डाक्टर ने बताया, ब्राण्डी पीओ। मैं बोतल ले आया। दो-तीन दिन बाद कुछ ज्यादा पीने लगीं। उन्हें इससे सरूर हो जाता। इस सरूर में उन्हें मजा आने लगा और सेहत भी अच्छी महसूस करने लगीं। इस बोतल के बाद दूसरी बोतल मंगा ली। इसी तरह रोज-ब-रोज उनकी पीने की आदत बढ़ती गई। मैंने जब यह देखा कि मालकिन शराब पीने लगी हैं तो मैंने भी कभी-कभी

पीनी शुरू कर दी। मोहल्ले वालों में कानाफूसी होने लगी। हमें मजबूरन मोहल्ला छोड़ना पड़ा।

मरहूमा ने मुझसे कुछ ऐसी बात कही थी जिसकी वजह से मैं उनका साथ नहीं छोड़ सका। उन्होंने कहा था—

—मुनीर, मैंने तुम्हें भूखों मरने से बचा लिया था। अब तुम्हारा फर्ज है मुझे अकेला छोड़कर मत जाओ।

इसी लिये मैंने उनके साथ रहने की कसम खा ली।

जहाँ तक शहर में इस बात की चर्चा थी कि मरहूमा ने पेशावरी अपना ली है, इसकी असलियत सिर्फ इतनी थी कि नशे की हालत में उन्हें गजलें सुनने का शौक हो गया, जिसकी वजह से शायरों का और उनके साथियों का आना-जाना शुरू हो गया और इसी वजह से, इसी आने जाने ने उन्हें बदनाम कर दिया। उनकी हालत शायद शराब से इतनी खराब न होती जितनी मेहमानदारी से हो गई। इधर माली हालत खराब होने का सदमा, उधर औलाद और दामाद के आँखें फेरने का रंज, दोनों ने सेहत एक-दम गिरा दिया और वह उस मंजिल पर पहुंच गई जहाँ से कोई लौट न सका।

मैंने जब हालत इतनी खराब देखी तो अस्पताल में दाखिल करा दिया और खुद हाजी जी के यहाँ नौकरी कर ली ताकि कुछ पैसे मिलें तो उनकी सेवा कर सकूं।

यह है तमाम माजरा अदीब भइया!

अब अदीब भइया तुम ही फैसला करो मैं कहां तक गुनहगार हूं और मरहूमा कहां तक बदनाम हैं। अदीब और जाहिदा दोनों बहुत ध्यान से सुन रहे थे। दोनों इस नतीजे पर पहुंचे कि मुनीर का कोई दोष नहीं और न वालिदा पर लगाये गये इलजाम सही हैं। जाहिदा

के मन में मुनीर की छेड़छाड़ थी जो उसके कामुकता का परिणाम था। बहरहाल अदीब ने कहा कि वह उसके साथ दूकान पर काम करे और इस घर को अपना घर समझे।

मुनीर अपनी चाल में सफल हो चुका था और इस घर पर भी उसी तरह अधिकार जमा लिया जैसे हमीदा के घर पर जमाया था।

एक दिन मुनीर दूकान से जल्दी आ गया। जाहिदा मुनीर से अकेले में मिलना नहीं चाहती थी। उसका माथा ठनका कि आज मुनीर जल्दी घर क्यों आ गया है और अदीब अभी तक दूकान पर काम कर रहा है।

उसने मुनीर से पूछा—आज क्या बात है, तुम दूकान से जल्दी घर आ गये हो ?

—आज मेरा जी ठीक नहीं है। सर में दर्द और जिस्म बोझल हो रहा है।

—किसी डाक्टर से दवाई ली होती।

—मेरे दर्द का इलाज डाक्टर के पास नहीं।

जाहिदा ने लापरवाही से कहा—क्या तुम्हारे खयाल में शहर के सारे डाक्टर कमअक्ल और नालायक हैं ?

—मेरे मर्ज का इलाज डाक्टरों के बस का रोग नहीं।

—यह आज तुम कैसी नासमझी की बात कर रहे हो ?

मुनीर ने तिरछी निगाह डाली—कुछ न समझ खुदा करे कोई !

—तुम्हारा दिमाग तो खराब मालूम होता है।

—आगे आगे देखिये होता है क्या ? मुनीर ने एक सर्द आह भरी।

—यह आज तुम आहें भर कर मुझे क्या बतला रहे हो ?

मुनीर ने मजे ले ले कर कहना शुरू किया—

मोहब्बत सर्द आहें, मोहब्बत गर्म आंसू।
इलाही सारी दुनिया को, यही आजार हो जाये ।।

जाहिदा की त्योरी चढ़ी—मुझे ये सब बातें अच्छी नहीं लगतीं।

—जाहिदा, चाहे ये चीजें तुम्हें अच्छी लगें या नहीं, मैं तुम्हारा खामोश पुजारी हूं और तुमको तमाम उम्र इसी तरह पूजता रहूंगा जैसे आज तक पूजता आया हूं। मेरा तुम्हारी मां का कोई नाता-रिश्ता नहीं था। मैं सिर्फ तुम्हारे इश्क से मजबूर होकर तुम्हारी माँ का मुलाजिम था और तुम्हारे लिये आजतक घुलता रहा हूं और घुलता रहूंगा। यह मुझे अच्छी तरह मालूम है तुम मेरी नहीं बन सकतीं लेकिन जबतक साँस चल रही है, इस दिल से तुम्हारी मोहब्बत निकल नहीं सकती।

—यह आज तुम कैसी बहकी बहकी बातें कर रहे हो। कहीं इन बातों का अदीब को इल्म हो गया तो मैं कहीं की न रहूंगी। मैं तुम्हारे इश्क की कदर करता हूं लेकिन तुम्हें; तुम्हारी मोहब्बत का वास्ता देती हूं कि यह सब कुछ राज ही रहे।

—अगर तुम मुझसे एक वादा करो तो ऐसा ही होगा।

—वह क्या ?

—मैं तुम्हारे साथ.....नहीं चाहता मगर इतना चाहता हूं कि तुम मेरी मोहब्बत को गुस्ताखी न समझो और इस घर में पड़ा रहने दो ताकि मैं सदा तुम्हारी खूबसूरती की लौ से अपनी खामोश मोहब्बत के दीये को जलाये रखूं।

—मैं तुम्हारी शर्त मानती हूं लेकिन यह भेद, भेद ही रहे।

मुनीर—और खुल जायेंगे दो चार मुलाकातों में—गुनगुनाता हुआ

चला गया। इधर काफी दिनों से मुनीर ने कोई असभ्य या असहनिय चाल न चली जिससे जाहिदा भिन्नाती। हां, बातचीत कुछ ऐसे ढंग से किया करता था कि जाहिदा को विश्वास होता गया कि मुनीर को उससे मुहब्बत है।

मुनीर के साथ ने अदीब को शराबी बना दिया। जब जाहिदा को मालूम हुआ तो उसे बड़ी चिन्ता हुई। मुनीर ने जाहिदा से अपनी सफाई दे दी कि उसने यह आदत नहीं डाली, जो लोग दूकान पर आते हैं उन्होंने सिखाया है।

अदीब को जाहिदा ने बहुत समझाया, मगर कौन सुनता है। दिन-ब-दिन शराब और अइयाशियां बढ़ती गईं।

अदीब किसी वेसवा के साथ हफ्ते भर से गायब था, दूकान बिक चुकी थी और मुनीर जाहिदा को राम कर चुका था। अदीब किसी बेसवा के साथ और मुनीर जाहिदा के साथ दीन व दुनिया को भूल चके थे।

छः महीने के बाद जब अदीब घर लौटा तो उसका माथा ठनका। जाहिदा हामिला थी और मुनीर से। वह खून का घूंट पीकर चुप रहा मगर प्रतिशोध की आग उसके हृदय में ज्वालामखी के समान उबल रही थी।

पहले उसने मकान बेच दिया, फिर बहाने से जाहिदा को पड़ोस में भेजकर उसके तमाम जेवर और कीमती कपड़े ले जाकर बेच दिये।

जब जाहिदा आई तो उसने बड़ी गम्भीरता से कहा—जाहिदा, मुझे मालूम है तुम मुझे शक व शुबहा की नजरों से देख रही हो। मैंने एक रंडी की मुहब्बत में दूकान बेच दी और तुमको भी भूल गया। छः माह तक गायब रहा। लेकिन.....मुनीर की मौजूदगी ने मेरी

गैरहाजिरी को महसूस न होने दिया होगा। फिर भी मैंने जानबूझ कर अपने फर्ज में कोताही की और तुमको परेशान किया। अब मुझे होश आ गया है। अब न शराब पीता हूं न तवायफ़ों के हुस्न से लगाव है। यह सब न जाने मुझसे कैसे हो गया। खैर, मुझे उम्मीद है कि तुम इसका खयाल न करोगी। और हाँ, आज मैंने तुम्हारे गहने और मकान भी बेच दिया है।

तुम घबरा गईं। मैं तो समझता था कि तुम्हारी हर चीज पर मेरा हक है। इसीलिये मैंने तुमसे पूछे बिना ये सब चीजें बेच डालीं। मगर यह पैसा सिर्फ तिजारत में लगेगा क्योंकि सारी पूंजी खत्म हो चुकी है। अब जिन्दगी कैसे गुजरेगी जबतक कोई मुस्तकिल काम शुरू न होगा?

जाहिदा यह सब कुछ सुनकर ज्यादे परेशान न हुई। उसने समझा उसका मियां ठीक रास्ते पर आ गया है। यह पूंजी तिजारत में लगायेगा, मगर उसे पता न था कि अदीब बदला लेने पर उतर आया है।

जिस बात का बदला लेने अदीब जा रहा था, जो चूक जाहिदा से हो चुकी थी इसकी सारी जिम्मेदारी अदीब के करतूतों पर ही थी।

थोड़ी देर के लिये अदीब ने जाहिदा को शीशे में उतार लिया था और जब जाहिदा शान्त हो गई तो वह मुनीर से कहने लगा—

—मुनीर मैं तुम्हारा एहसानमन्द हूं। तुमने बहुत नमकहलाली से काम लिया है। जिसे मैं क्या, जमाना भी भला नहीं सकेगा!

दो दिन बाद जब रुपये हाथ आ गये तो अदीब चलने के लिये तैयार हो गया। जाहिदा ने परेशान होकर कहा—अभी तो आपने नाश्ता भी नहीं किया। थोड़ा-सा नाश्ता पका दूं।

अदीब झुंझलाते हुए बोल पड़ा—नहीं, नाश्ते की जरूरत नहीं।

—आपको आये हुए तो अभी दो रोज हुए हैं, अभी चलने की भी लग गई। दो-चार दिन तो ठहर जायें।

अदीब ने जरा नम्र स्वर में कहा—

—अरे जाहिदा, यह दो रोज भी मुझ पर भारी गुजरे हैं। कुछ कारोबार का झंझट ऐसा है कि मेरा यहां ठहरना अच्छा नहीं वरना जिस कदर मुनाफे की उम्मीद है, वह नहीं मिलेगा।

मुनीर ने अदीब की निगाह बचाकर जाहिदा को कुछ इशारा किया। जाहिदा ने उसे समझते हुए कहा—

—घर खर्च के लिये कुछ पैसा तो देते जाइये। मेरे पास तो एक पैसा भी नहीं है। इधर-उधर से कर्ज माँग कर काम चला रही हूं।

—मेरे पास इस वक्त चेक है, नकद रुपये नहीं हैं। कल ही मनीआर्डर कर दूंगा।

जाहिदा चुप्पी लगा गई और अदीब चला गया।

अदीब लाहौर आ गया। उसके साथ खुरशीद बाई भी थी। यह एक नौजवान बेसवा थी मगर चालबाजियों में बड़ी चतुर। वह अब तक अदीब से आठ हजार रुपये नकद लेकर घर भेजवा चुकी थी। अब यह अदीब की सत्रह हजार आखिरी पूंजी थी जिस पर वह दांत गड़ाये बैठी थी। अदीब ने कई बार उसे ब्याह करने के लिये कहा मगर वह हमेशा यही कहकर टाल देती कि मुझको बिलकुल ही अपना गुलाम मत बनाओ। तुम्हारी मुहब्बत ने वैसे ही अन्धा कर रखा है अब क्या घर के बरतन भी मुझी से साफ कराओगे और अदीब मुस्कराकर चुप चुप हो जाता।

कुछ ही दिनों में अदीब के सब रुपये गल गये और जब अदीब के पास कुल एक सौ आठ रुपये रह गये तो उसने थाने में रिपोर्ट लिखाई—

—अदीब मुझे भगाकर लाया है। मेरा सारा जेवर बरबाद कर दिया और मुझे धमकियां देकर शादी के लिये मजबूर कर रहा है मगर मैं वापस जाना चाहती हूं।

अदीब अचानक गिरफ्तार कर लिया गया। जब वह हवालात में बन्द था तो उसे इतना होश आ चुका था कि वेसवायें किसी की नहीं होतीं।

तीसरे दिन अदीब को रिहा कर दिया गया। अब वह इस दुनिया में बिलकुल अकेला और बेसहारा था। यह गनीमत थी कि वह मैट्रिक पास था। कुछ दिन दौड़ धूप के बाद उसे नौकरी मिल गई।

नौ

जाहिदा कई दिन मनीआर्डर की प्रतीक्षा करती रही। मगर किसका मनीआर्डर, कहां का मनीआर्डर। सोने में सोहागा यह कि मनीआर्डर के बदले मकान मालिक का नोटिस आ गया कि या तो छः महीने का बाकी किराया दो या मकान खाली करो।

इधर वली दसवीं में था। उसकी फीस चाहिए थी। सबसे बड़ी समस्या यह थी कि वह गर्भवती थी। जाहिदा कुछ समझ न सकी, क्या करे, क्या न करे। मुनीर का रुख भी बदल चुका था। उसने भी अल्टीमेटम दे दिया कि रोटी भी ठीक से मिलती नहीं, मैं घर छोड़ दूंगा। जाहिदा कभी रोती, कभी कुछ सोचती। कभी उसका जी प्राण त्याग देने को करता। वह अजीब चक्कर में फंसी हुई थी। वली अब काफी समझदार हो गया था। वह सारी बातें समझता था मगर कुछ कह न सकता था। जब उसने अपनी बहन की यह हालत देखी तो कहा—

बाजी, तुम फिक्र मत करो। मैं बड़ा हो गया हूं, तुम्हें मजदूरी करके भी रोटी खिला सकता हूं।

जाहिदा ने वली को गले लगा लिया और जी भरके रोती हुई बोली—

—मुनीर रूखा सा जवाब देकर अपने रास्ते पर हो लिया। कर्ज मिलने के रास्ते बन्द हो गये क्योंकि उसे मालूम था कि अदीब ने सब कुछ बेच दिया है और खुरशीद को साथ लेकर चला गया है।

अगर अदीब होता तो इस हाल में भी वह खुश होती, मगर आज वह खुश होने के बजाये उसका गला घोंट कर मार देना चाहती थी। आज वह अपनी नासमझी और भोलेपन में किये हुए गुनाहों पर लज्जित थी मगर यह पश्चाताप और लज्जा उसके गुनाह की कालिमा को धो न सके।

जाहिदा जब अस्पताल गई तो मकान मालिक ने मकान खाली करा लिया। वली अपना बोरिया बिस्तर लेकर अपने एक रईसजादे दोस्त के सर्वेन्ट क्वाटर में शिफ्ट कर गया। वली ने अपने दोस्त अजीज के बाप से कह दिया था कि जब उसकी बहन आयेगी तो वह उनके घर का काम-काज करेगी और इस तरह उसे वहां जगह मिल गई।

दस दिन के बाद जाहिदा को अस्पताल छोड़ना पड़ा और अब वह अंधेरी कोठरी में जीवन के दिन काटने पर विवश हो गई। अभी उसे आराम की जरूरत थी मगर अजीज के बाप ने कुछ ऐसी तीखी और कड़वी बातें कीं कि जाहिदा को उनके घर का काम संभालना ही पड़ा।

अजीज के बाप केनाल विभाग में डिप्टी कलेक्टर थे। उनके घर मेहमानों का आना-जाना लगा रहता था। वैसे भी घर में दस-बारह आदमी खाने वाले थे। इन सब का खाना जाहिदा को पकाना पड़ता था। एक जच्चा को जो आराम मिलना चाहिए था, न मिल सका। हालत कुछ विपरीत सी। जमाने के चक्कर थे। मुसीबतों का साया पड़ गया था मगर वह इस बदली हुई हालतों का सामना कर रही थी।

नन्हीं सी जान को घन्टों रोते-बिलखते बीत जाते मगर दूध पिलाने की छुट्टी नहीं मिलती थी।

वली एक डाक्टर के यहाँ दिन भर काम करता था। जाहिदा ने मालकिन से कई बार कहा कि अगर कोई दूसरा नौकर हाथ बँटाने के लिये और रख लिया जाय तो अच्छा है मगर मालकिन का नाक भौं चढ़ाकर उत्तर था—

—गेहूं की रोटी मिलने लगी है ना ! दो-चार रोटियां पकाना भी मुशकिल हो गया है। वह वक्त भूल गया जब तेरा भाई रोता हुआ आया था और मैंने तरस खाकर जगह दे दी। रोटी अलग, तनखाह अलग, रहने को मकान अलग, अब और क्या चाहिए तुझे ?

जाहिदा ने सुना और चुप हो रही। वह सोचती, अल्लाह जो सजा दे रहा है उसे सब्र से झेलना ही पड़ेगा। केवल वही दिन उसकी छुट्टी का होता जिस दिन तमाम घर वालों की किसी के यहाँ दावत होती। जाहिदा बहुत ही सुघड़ और सलीकदार हो गई थी। उसे पच्चीस रुपये महीने यहाँ से मिलता था। तीस रुपये वली लाता था। वह इन रुपयों में से मुशकिल से दस रुपये खर्च करती और बाकी जमा करती जाती। रोटी का हिसाब यह होता कि जो कुछ उस घर से वह लाती, दोनों भाई-बहन उसी में गुजारा करते।

इसी तरह पांच माह बीत गये, अब वह सारे काम काज करने की आदी हो गई। उसकी सेहत भी अच्छी हो गई थी।

एक दिन डिप्टी साहब के यहाँ मेहमान आये थे। जाहिदा को काफी सवेरे उठना पड़ा। उसने बच्चे को दूध पिलाया और रोजाना की तरह पलंग पर लिटा कर इधर-उधर छोटे-छोटे तकिये लगा दिये और घर में जाकर काम करने लगी। लगभग नौ बजे शोर मच गया

कि कुत्ते ने बच्चे को फाड़ खाया। बेगम ने दरवाजे से झाँक कर देखा तो जाहिदा की कोठरी पर सब जमा हो थे।

उन्होंने भय से कांप कर कहा—है, है, जाहिदा जरा देखियो कहीं तेरा बच्चा न हो ?

जाहिदा अन्धाधुन्ध भाग खड़ी हुई। देखा तो उसके नन्हें मुन्ने की आंतें बिखरी पड़ी हैं और सारा चेहरा कुत्ते के पंजों से धुनी हुई रुई बन गया है।

डिप्टी साहब ते सज्जनता दिखाई। उन्होंने जाहिदा से न केवल क्षमा मांगी बल्कि दो सौ रुपये भी दिये। दुःख की अनुभूति दर्शाई। जाहिदा चुप थी। उसके शोक का पारावार नहीं था। वह समझ रही थी कि इसमें डिप्टी साहब का क्या अपराध है। अल्लाह को जो मंजूर था सो हुआ।

उन्होंने गेंद तो दूसरी ओर फेंकी थी मगर अचानक यह कोठरी में जा पड़ी। कुत्ता कोठरी में घुस गया। गेंद की खोज में बच्चे को चीर डाला। रो-धो कर वह चुप हो रही।

रात को उसने स्वप्न देखा—

"दरबार लगा हुआ है। दोनों तरफ लोग हाथ बाँधे खड़े हैं। बीच में तख्त पर एक बुजुर्ग बैठे हैं। वे हुक्म देते हैं कि मुलजिमा जाहिदा को लाओ। सिपाही जाहिदा को उनके सामने ले जाते हैं। जाहिदा के हाथों में नन्हा-सा बच्चा है। वह बुजुर्ग कहते हैं कि जाहिदा, तूने पाप किया है और बहुत बड़ा पाप किया है। तू अपनी पवित्रता को छोड़कर गुनाहों के राह पर चल पड़ी। अपने मियाँ से धोका किया। उसे जब यकीन हो गया कि तेरे और मुनीर के मिलाप से हमल है तो वह सब कुछ बेच कर तुम दोनों को तुम्हारे हाल पर छोड़कर चला गया। अगर वह

यह पाप न जान पाता तो वह तुझे इस तरह धक्के खाने को न छोड़ता। मगर उसे तेरे इस हमल से तेरे गुनाहों का रहस्य मालूम हो गया।

अब फैसला हमारे पास है। हम तुझे यह सूचना देते हैं कि अल्लाह तुझसे नाराज है और इसकी सजा यह है कि तेरे बच्चे को जो तेरे माथे का दाग है, हम कुत्तों से फड़वा देने का हुक्म देते हैं।

बुजुर्ग का यह कहना था कि एक आदमी एक भयानक कुत्ता लेकर आगे बढ़ा और दूसरे आदमी ने जाहिदा के हाथों से बच्चे को छीनकर कुत्ते के सामने डाल दिया। कुत्ते ने क्षण भर में बच्चे को चीर-फाड़ डाला। जाहिदा ने चीख मारी तो उसकी आँख खुल गई।

वली भी उठ बैठा, पूछा—बाजी, क्या बात है?

जाहिदा ने कुछ न कह कर बात टाल दी और सारी रात इसी उधेड़-बुन में बिता दी। उसे विश्वास हो गया कि मुझे यह सजा केवल उसी गुलाह की बदौलत मिली है और उसी गुनाह की बदौलत बच्चे का जीवन ज्योति बुझी है। वह एक सीमा तक संतुष्ट भी थी कि चलो अच्छा हुआ, गुनाह की निशानी न रही। वरना सारी जिन्दगी न जाने क्या-क्या घटनाएं घटतीं।

तीन-चार दिन बाद फिर काम करना शुरू कर दिया। अब बच्चा न था जिसकी फिक्र परेशान रखती। अब जाहिदा की सुन्दरता निखरने लगी। यहाँ तक कि वह डिप्टी साहब के लड़के अजीज की नजरों में समाने लगी। अजीज अब ज्यादातर रसोई घर में बातें करता पाया जाता और अकसर खुश हो कर अच्छी खासी टिप भी दे दिया करता।

मगर जाहिदा का हृदय एक अनजाने भय से कांप रहा था।

वह सोचती थी अगर किसी दिन अजीज ने हाथ पकड़ लिया तो मैं क्या करूँगी ? अपना हाथ कैसे छुड़ाऊँगी ? फिर गुनाह की गन्दगी में फंस जाऊँगी जिससे अभी-अभी छुटकारा मिला है।

वह अजीज के बढ़ते हुए पग के बारे में न वली से कुछ कह सकी, न मालकिन से शिकायत कर सकी। कुछ विचित्र दशा थी उसकी।

एक दिन वह गोश्त भून रही थी। गर्मी के कारण चेहरा तमतमाया हुआ था। इसी बीच अजीज आ गया। जाहिदा ने घबरा कर दुपट्टा लपेट लिया। अजीज मुस्कराने लगा। पास बैठ कर कहने लगा—

—जाहिदा आज तुम्हें मेरी एक बात का जवाब देना पड़ेगा।

जाहिदा बौखला गई—जी, जी, क्या ?

—यही कि तुम मुझे देख कर घबरा क्यों जाती हो ? तुम्हारे चहरे की लाली फीकी क्यों पड़ जाती है ?

जाहिदा कुछ जवाब न दे सकी। उसने देगची में करछी इस जोर से घुमाया कि वह जमीन पर आ रही। जाहिदा के मुंह पर हवाइयाँ उड़ने लगीं और उसी समय अजीज की अम्मा भी आ गईं। सारा गोश्त बिखरा हुआ देखकर आपे से बाहर हो गईं।

अरे कमबख्त, खा-खा के हाथी हो रही है। क्या देगची से कुश्ती लड़ी थी.....?

अभी जाहिदा कुछ उत्तर न दे पाई थी कि अजीज ने खड़े होते हुए कहा—

—आप इस बेचारी पर क्यों खफा हो रही हैं। यह तो मुझसे गिरी है। जल्दी में देगची उतार रहा था कि मेरा हाथ जल गया।

बेगम साहिबा का मूड एकदम बदल गया। कहने लगीं—अजीज, तुम भी घोड़े पर सवार रहते हो। मैं जाहिदा पर बरसने लगी थी। जाहिदा दिल ही दिल में अजीज की सराहना कर रही थी कि उसने तमाम बला अपने सर ले ली और वह व्यंगात्मक झिड़कियों से बच गई।

दिन इसी तरह बीतते रहे। अजीज, जाहिदा को मुहब्बत भरी निगाहों से देखता रहा और जाहिदा आने वाली तूफानी वेग से चिन्तातुर रहने लगी जिसकी भविष्यवाणी अजीज की आंख कर रही थी।

दस

एक दिन बेगम साहिबा अपने परिवार के सारे सदस्यों के साथ कहीं दावत में सुबह से ही गईं थीं। अजीज कालेज गया हुआ था, इसलिये वह न जा सका।

लगभग ग्यारह बजे का समय था। जाहिदा सहन में झाड़ू लगा रही थी कि अजीज आ गया। न जाने क्यों जाहिदा सहम गई। उसके हाथ इधर-उधर पड़ने लगे। अजीज सीधा अपने कमरे में चला गया। वहाँ से जाहिदा को आवाज दी। जाहिदा कांप गई। अजीज ने दूसरी आवाज दी, फिर तीसरी आवाज पर किसी न किसी तरह साहस करके जाहिदा को अजीज के कमरे में जाना पड़ा। वह पहुंची तो अजीज ने कहा—जाहिदा, यहाँ कुरसी पर बैठो, आज कितने दिनों बाद तुमसे बात करने का मौका मिला है।

—मगर मुझे आपने किस लिये बुलाया है, हुक्म दीजिये ना!

—अरे जाहिदा, तुझे और हुक्म! अभी तो तुम्हारे वह दिन हैं कि तुम हुक्म दो और दूसरा सर झुकाये।

—अजीज मियाँ, अभी मुझे बहुत सा काम करना है।

—आखिर तुम इतना घबरा क्यों रही हो। काम तो होता ही रहता है और अब तो मैंने अम्मी से कह दिया है, वह एक और नौकरानी रख लें।

—आपका शुक्रिया, मगर.....

—फिर वही अगर मगर। आखिर तुम मुझसे बात करने से इतना कतराती क्यों हो? क्या मैं इतना बदसूरत हूं कि तुम मेरी सूरत देखकर डर जाओ?

—खुदा के लिए अजीज मियाँ, मेरा सकून न छीनिए। मुझे पाकीजा जिन्दगी गुजारनी है और आपका फर्ज है कि आप इस बात का मौका दें।

—अरे यह तुम किस जमाने की बातें कर रही हो? यह बातें तो सदियों पुरानी हैं। आज के जमाने में पाक और नापाक कोई चीज नहीं, बेवकूफी है।

जाहिदा ने जल्दी से कहा—मेरा शौहर भी जिन्दा है, वह मुझसे नाराज है।

—अरे वह शौहर ही क्या जो बीवी को इस हाल में पहुंचा दे। तुम उसे भूल जाओ और मुझे अपना लो।

—मैं एक की हो चुकी हूं लब दूसरे की नहीं हो सकती।

—इसका मतलब है तुम मुझे ज्यादती पर मजबूर कर रही हो।

—यही आपकी मुहब्बत का सबत है जो आप ज्यादती पर भी तैयार हैं?

—मगर मेरे दिल में जो आग भड़क रही है उसका क्या इलाज है?

—अगर आपके दिल की आग किसी की जिन्दगी को जला कर खाक कर देना चाहती है तो मैं क्या कह सकती हूं सिवाय इसके कि यह जुल्म है और जुल्म करना इन्सान का काम नहीं है।

—अच्छा, इन्सान नहीं, मैं हैवान बनने को तैयार हूं। मगर तुम्हें इस कमरे से बाहर जाने की इजाजत देने के लिये तैयार नहीं

—एक मजबूर औरत पर जो आप ही के टुकड़ों पर पल रही है, कुचल देना चाहते हैं। मगर यह न भूलें अजीज मियां कि सूखे टुकड़ों पर पलने वाली बा-असमत औरत अपनी असमत को बचाने के लिये भूखी शेरनी से ज्यादा खतरनाक हो सकती है।

—ओ हो, तो अब तुम धौंस देने लगीं। मगर तुम्हारी यह धौंस मेरे लिये कुछ असर नहीं रखती। आज तुम्हें हमारी चाह की आबरू रखनी ही पड़ेगी।

यह कह कर जाहिदा का हाथ पकड़ कर घसीट लिया। जाहिदा ने रोकटोक की मगर उसकी कुछ न चली। अभी पाशविकता का आरम्भ ही था कि बेगम साहिबा की आवाज सुनाई दी। अजीज ने जाहिदा को छोड़ते हुए कहा—अगर आज रात तू मेरे पास न आई तो कल सुबह दुनिया तुम्हारा तमाशा देखेगी।

बेगम साहिबा ने घर में घुसते ही सुनानी शुरू की—देखो अभी तक झाड़ू बोहारू भी नहीं की। जब तक सर पर कोई चढ़ा न हो, हरामजादी काम ही नहीं करती।

जाहिदा ने जल्दी-जल्दी झाड़ू चलाना शुरू किया मगर उसके मन में रह-रह कर यह बात चक्कर लगा रही थी कि सुबह क्या होगा अगर वह आज की रात अजीज मियां के पास न गई? कल क्या गुल खिलेगा? अजीज के पास कौनसा ऐसा हथियार है जिसका वह कल तमाशा बनायेंगे?

वह बहुत बेचैन थी और इस बेचैनी की हालत में रात आ गई। जब वह खाना ले कर अपने कमरे में आई तो वली ने एकदम शुभ सूचना दी कि मेरी तनखाह पचास रुपये हो गई। जाहिदा जैसे अनसुनी रह गई। वह अपनी खुशी जितनी चाहिए थी प्रकट न कर सकी।

बली ने अनुभव किया कि जाहिदा परेशान है इसलिए वह चुप रह गया और फिर जाहिदा से कुछ न कह सका।

थोड़ी देर बाद जाहिदा बोली—वली तुमने क्या कहा, तुम्हारी तनखाह पचास रुपये हो गई है ?

—हां, बाजी हां, आज पचास रुपये हो गई है।

यह तो बहुत अच्छा हुआ। मगर वली यह तो बताओ, कहीं रहने की जगह भी मिल सकती है ?

—क्यों बाजी, खैर तो है। क्या यहाँ से जी उकता गया है ?

—नहीं, काम से तो जी नहीं चुराती। इससे दुगना काम हो तो कर लूँगी मगर अब यहाँ रहना नहीं चाहती और कल ही चला जाना चाहती हूं।

—आखिर क्यों बाजी ?

बस, यह न पूछो भइया। यह बताओ कहीं रहने की जगह मिल सकती है ?

—हाँ, मिल तो सकती है मगर आठ रुपये माहवार से कम किराये का कोई मकान नहीं मिल सकता।

—बला से ! वली, तुम कल मकान ले लो। तुम्हारी भी तनखाह बढ़ गई है। इधर कुछ रुपये मेरे पास भी जमा हैं और फिर मैं कहीं नौकरी कर लूँगी। सब की गुजर हो जायेगी।

—इन्शाअल्ला, बाजी, मैं कल मकान का इन्तजाम कर दूंगा।

जाहिदा ने अपनी पूंजी पर नजर डाली तो पूरे नौ सौ रुपये थे। यह चौदह महीनों की दोनों भाई-बहन की तनखाह थी और दो सौ रुपये जो उसके बच्चे के अफसोस में डिप्टी साहब ने दिये थे। जाहिदा

ने इतमीनान का सांस लिया कि अब उसके जीवन के अन्धेरे खत्म हो जायेंगे।

दोनों आराम से सो गये। वली सुबह उठकर मकान की खोज में चल दिया और बेगम साहिबा से जाहिदा ने कहा—

—मैं आपकी बड़ी शुक्रगुजार हूं कि आपने मेरे साथ यह सलूक किया जो मेरे अपने नहीं कर सकते थे। मैं यहाँ बहुत खुश रही मगर कुछ ऐसी मजबूरी आन पड़ी है कि जाना पड़ रहा है। अगर आप इजाजत दें तो चली जाऊँ।

बेगम ने प्यार से पूछा—मगर बेटी, वह मजबूरी क्या है ?

—क्या बताऊँ, कुछ ऐसे ही घर के झगड़े हैं। यह तो आप जानती है कि मेरे मियाँ नाराज होकर लाहौर चले गये हैं। अब उन्होंने यह शर्त लगाई है कि नौकरी छोड़कर कहीं और रहने का इन्तजाम करो।

—अच्छा बेटी, तुम्हारी मरजी। कल को यह न कहना कि बेगम साहिबा ने निकाल दिया। तुम अपनी खुशी आई थी, अपनी खुशी से जा रही हो। हाँ, इसका मुझे जरूर अफसोस है कि तुम्हारा बच्चा मेरी वजह से गया। शायद अल्लाह की मरजी ही ऐसी थी।

—अजी, अब उसका क्या मलाल। आपने कोई जानबूझ कर थोड़े ही ऐसा किया। इत्तफाक की बात थी।

इस छोटी सी बातचीत के बाद वह अपने कमरे में जाकर अपने थोड़े बहुत सामान को ठीक करने लगी ताकि अजीज के आने से पहले यहाँ से चली जाये। अब वह वली का बेचैनी से इन्तजार कर रही थी।

दस बजे वली आया। कहने लगा—चलो बाजी, मकान मिल गया।

जाहिदा के खुशी की सीमा न थी। वह सब सामान ताँगे में रखवा कर बेगम साहिबा को सलाम करने अन्दर आई। बेगम ने सत्रह रुपये तनखाह के और पाँच रुपये ऊपर से दिये। कहा—जाहिदा, जब मौका मिला करे, आती रहना।

और जाहिदा, जी अच्छा, कह कर विदा हो गई।

वह अपने नये मकान में आई। आते ही चूल्हा जलाया और हलवा बनाया। इसके बाद कुछ और चीजें बाजार से मँगवाईं ताकि कुछ भिखारियों में खाना बँटवा सके।

जब अजीज कालेज से आया तो उसे मालूम हुआ कि जाहिदा चली गई। उसे जैसे साँप सूंघ गया। वह बदला न ले सका। उसने कुछ सोचा और मौका देखकर चुपके से अपनी माँ का नेकलेस बक्से से निकाल कर ऊपर के कमरे में एक मेज की दराज में छुपा दिया। फिर नीचे आ कर कहने लगा—

—अम्मी, जाहिदा के एकदम चले जाने में कोई भेद है। आपने अपने जेवर वगैरह भी देख लिये हैं या नहीं। कहीं ऐसा न हो कि कुछ लेकर चल दी हो।

—ऐ है, अजीज मियाँ वह ऐसी नहीं थी। आदमी की कदर चले जाने पर या मर जाने के बाद होती है। आज सारा काम मुझे करना पड़ा तब मालूम हुआ, वह कितना काम करती थी।

—अम्मी, इसमें हर्ज ही क्या है कि आप अपनी सब चीजों पर एक नजर डाल लें।

—अच्छा, अच्छा, मियाँ! देख लूँगी। जरा रोटी के धन्धे से निपट लूँ।

—मगर अम्मी, मेरा दिल कहता है जरूर कोई बात है। यह

काम धन्धा तो लगा ही रहेगा। आप एक-दो मिनट में देख तो लीजिये। कहीं ऐसा न हो, जाहिदा किसी दूसरे शहर निकल जाये और पछता कर रह जायें।

—तौबा, तौबा! न जाने तुम्हें क्या लग गई है, लो देखे लेती हूं।

यह कहकर बेगम साहिबा उठीं। पहले गहनों की अटेची खोली और चीख पड़ीं—ऐंहे—मेरा नेकलेस कहाँ है?

अजीज बोल पड़ा—मैं न कहता था अम्मी, और चीजें तो देखो।

—अरे अजीज मियां तुम सच कहते थे। सब चीजें जैसी की तैसी हैं। सिर्फ नेकलेस गायब है।

—तो अब क्या होगा?

—कुछ भी हो, उस हरामजादी का पता लगाओ! मेरा तो चार हजार का नेकलेस था।

सारे घर में शोर मच गया कि जाहिदा नेकलेस चुराकर चल दी। थाने में रिपोर्ट लिखाई गई। जाहिदा की खोज शुरू हुई।

चार बजे के लगभग जब जाहिदा के वहां भिखारी खाना खा रहे थे तो पुलिस पहुंची। पहले मकान की तलाशी ली। मकान से कुछ न मिला तो उसे पकड़ कर डिप्टी साहेब के सामने लाया गया। डिप्टी साहब इसी ख्याल के थे कि जाहिदा ऐसा नहीं कर सकती लेकिन उन्हें यकीन दिलाया गया कि इस घर में सिवाये इसके कोई नहीं आया।

जाहिदा जब डिप्टी साहब के सामने आई तो वह बोले—

—जाहिदा मैं तुम से यह उम्मीद नहीं कर सकता था। मैं तुझे बहुत नेक समझता था। आज तूने नेकी का भरम खोल दिया।

जाहिदा तो जान ही गई थी कि यह सब अजीज मियां के बदला लेने की भावना का फल है। इसलिये उसने राग्रांसी होकर डिप्टी साहब से कहा—

—अगर हजूर इजाजत दें तो मैं अकेले में कुछ अर्ज करना चाहती हूं।

—हां इजाजत है।

डिप्टी साहेब जाहिदा को लेकर अपनी बैठक में आ गये और कहा—अगर तू जुर्म का इकरार कर ले और नेकलेस मुझे दे दे तो मैं तुझे कुछ न कहुंगा।

जाहिदा ने हिचकी लेते हुये कहा—सरकार, यह तो बाद की बात है। मैं सिर्फ इतना कहना चाहती हुं कि आप मेरे साथ चलें और अजीज मियां के दोनों कमरों की तलाशी लें।

डिप्टी साहब यह सुनकर आग बबूला हो गये, कहने लगे—

—अरी! क्या तू यह समझती है कि अजीज मियां ने चोरी की है। बदतमीज, उसे किस चीज की कमी है? आज तक उसने इस घर में ऐसा नहीं किया। अब वह चोरी करेगा। तू सही बता दे वरना पुलिस से कह कर तेरी चमड़ी उधड़वा दूंगा।

जाहिदा ने डिप्टी साहब के पैर पकड़ लिये और सर रखते हुये बोली—

—मैंने हजूर का नमक खाया है। मैं अजीज मियाँ पर इलजाम नहीं लगाती मगर मेरी बात मान जाइये। मैं बाद में सब कुछ बता दूँगी।

—आखिर तेरा मतलब क्या है?

—मेरा मतलब बस यही है कि अजीज मियाँ के दोनों कमरों की तलाशी ले लें। नेकलेस मिल सकता है।

—मगर उसने चोरी नहीं की।

—हजूर, इसकी वजह बाद में बताऊंगी। आप मुझे सूली पर चढ़वा दें, मगर मेरी बात मान ल।

डिप्टी साहब सोचने लगे माजरा क्या है? जाहिदा को यकीन था कि अजीज ने नेकलेस जरूर छुपाई है। आखिर डिप्टी साहब ने कहा—

—अच्छा, मैं तेरी यह बात मान लेता हूं।

—तो सरकार, अजीज मियाँ अपने कमरे में न जाने पायें।

—मुझे यह भी मंजूर है।

डिप्टी साहब जाहिदा को ले कर कमरे में गये। तलाशी ली मगर कुछ न मिला। अब दूसरे कमरे में जाने लगे तो जाहिदा दिल ही दिल में दुआयें माँग रही थी—

—यारब, मेरे गुनाहों की बहुत सजा मिल चुकी है अब तू अपनी रहमत भेज। ऐ मेरे परवरदिगार, तू मेरी लाज रख ले, तू तो बेखताओं को सजा नहीं देता!

यह लोग दूसर कमरे में पहुंचे। डिप्टी साहब हर चीज खुद ही देख रहे थे। दराज देखी तो नेकलेस मिल गया।

डिप्टी साहब हैरत से कभी जाहिदा को कभी नेकलेस को देखते। नेकलेस लिये वे नीचे आये। कमरे में जाहिदा को बिठाकर, बेगम के हाथों में हार दिया और बाहर आये। पुलिस से कहा—मामला निजी तौर पर निपट गया है, अब आप जा सकते हैं। पुलिस चली गई।

अजीज हैरत से अपने बाप को देख रहा था। डिप्टी साहब ने कहा—अजीज मियां, जब तक हम तुम्हें न बुलायें, अन्दर न आना।

अन्दर आये जहाँ जाहिदा को बिठा कर गये थे तो देखा कि बेगम साहिबा जाहिदा पर गालियों की बौछार कर रही हैं।

डिप्टी साहब ने जरा गर्म हो कर कहा—तुम आपे से बाहर हो रही हो बेगम, यह भी मालूम है इस नेकलेस का चोर कौन है ?

बेगम ने बेधड़क कहा—जाहिदा और कौन !

—नहीं, जाहिदा नहीं।

—तो फिर कौन है ?

—चोर तुम्हारा साहबजादा है।

बेगम अचकचाकर उनका मुँह देखने लगी। डिप्टी साहब ने जाहिदा को दूसरे कमरे में ले जाकर माजरा पूछा। जाहिदा बोला—

—अगर हजूर बुरा न मानें तो पूरी बात सुना दूँ।

डिप्टी साहब ने वादा किया तो जाहिदा ने बात बताई—सरकार सच बात यह है कि अजीज मियाँ की नीयत मेरी तरफ.....

—हाँ, हाँ, कहो बेटी, हम सब सुनेंगे। तुम्हें इजाजत दे चुके हैं।

—मैंने सरकार अजीज मियाँ को बहुत समझाया मगर वह जिद पर उतर आये और उन्होंने कहा कि अगर आज की रात मेरी बात पूरी न हुई तो कल मैं बदला.....

—बस, बस बेटी हम समझ गये।

—बस इसीलिये हजूर, यहाँ से नौकरी छोड़कर जाना पड़ा।

—ठीक है जाहिदा। हम तुम्हारे खतावार हैं। अजीज मियाँ की अभी हड्डी पसली तोड़कर रख दूँगा। आज मैं तुम्हारा बदला उससे लूँगा।

जाहिदा ने बड़े मीठे स्वर में कहा—सरकार, इस बात को आप यहीं खत्म कर दें तो अच्छा है। मारपीट से बात बढ़ेगी और सिवाय बदनामी के कुछ न होगा। आपको मेरी बेगुनाही का यकीन है, यही मेरे लिये बहुत कुछ है। आप खुदा के लिये अजीज मियाँ से कुछ न कहें।

इतने में बेगम साहिबा आ गईं। उन्होंने बदला हुआ वातावरण देखा। डिप्टी साहब बोले—सुन लिया तुमने, देख ली अपने लाडले की करतूत। एक बेचारी मासूम की दुरगत बनाने का इल्जाम भी तुम्हारे सिर है।

बेगम साहिबा सारी बातें जानने के लिए सर हो गईं। डिप्टी साहब ने सारी कहानी सुना दी। अब तो बेगम साहिबा भी बेटे की करतूत पर लाल पीली हो गईं। गुस्से में बाहर जाना चाहती थीं कि जाहिदा ने दामन थामते हुए कहा—

—आपको मेरी बेगुनाही की कसम है जो आप अजीज मियां से कुछ कहें। इस बात को बस यहीं खत्म कर दें।

जाहिदा के बहुत कुछ कहने सुनने के बाद दोनों ने चुप रहना ही अच्छा समझा।

डिप्टी साहब ने जाहिदा से कहा कि वह फिर आ जाये। अब उसे कोई शिकायत नहीं होगी। मगर जाहिदा नहीं मानी। उसका एक जवाब था—

—अब तो मुझे अलग ही रहने दीजिये। मैं अपनी जिन्दगी का रुख बदल चुकी हूं। अन्त में जाहिदा वापस चली गई।

डिप्टी साहब न अजीज से कहा—

—अजीज मियाँ, नेकलेस तुम्हारी मेज की दराज से मिल गया है।

और इस बात से अजीज पानी-पानी हो गया।

ग्यारह

जाहिदा ने अपने छोटे से घर में आकर नया जीवन आरम्भ किया।

वली सवेरे ही काम पर चला जाता और शाम को देर से घर आता। अब जाहिदा यह चाहती थी कि वह अपने जमा पूंजी से कोई काम शुरू करे जिससे जीवन एक बार फिर सुख और शान्ति के पालने में झूलने लगे। दिन बीतते रहे और जाहिदा केवल पचास रुपये में गुजर बसर करती रही।

मोहल्ले वाले भी यह भेद जान गये थे कि अदीब, इसका मियां इसे छोड़ गया है और यह पेशा कराने वाली हमीदा की बेटी है। मुनीर की रखेल रह चुकी है। ये बातें उन कामुक नवयुवकों को साहस की प्रेरणा के लिये काफी थीं जिनका प्रत्येक क्षण किसी काफिर हुस्न को मुसलमान बनाने में बीता करता था।

कुछ नौजवानों ने द्वार पर अड्डा जमाया मगर जाहिदा कभी-कभी ही दरवाजे पर आती थी। इससे उनकी मन्शा पूरी न हो सकी।

आखिर एक बिगड़े हुये रईसजादे हनीफ ने वली से दोस्ती बढ़ानी शुरू की। होते-होते हनीफ का घर में आना जाना बढ़ गया।

पहले पहले तो जाहिदा ने थोड़ा बहुत परदा रखा मगर बाद में सामने आने लगी। हनीफ अकसर यहीं खाना खाता और जो खाना चाहत वह जाहिदा को लाकर दे देता। इसकेइ लावे वह जाहिदा के लिये कभी फल लाता। कभी मिठाइयाँ और कभी-कभी कोई रेशमी सूट और साड़ी भी। फिर वह जाहिदा के सामने मचलता कि वह उस लिबास को पहने और जाहिदा को पहनना पड़ता।

वली अभी इन बातों की तह तक नहीं पहुंच सका था। इन सब बातों को हनीफ की सच्ची दोस्ती का नतीजा ही मानता। अब हनीफ जाहिदा के सम्पर्क में अधिक रहता। एक दिन वह आया और कहने लगा—

—चलो जाहिदा, चलो। आज तुम्हें मेटनी शो दिखा कर लायें।

—नहीं, मैं नहीं जाऊंगी।

—देखो जाहिदा, आज मेरा दिल सेनिमा देखने को बहुत चाहता है। अगर तुम नहीं जाओगी तो मैं भी नहीं जाऊंगा।

—आप मेरी वजह से क्यों नहीं जाते ? आप चले जाइये।

—मैं कह चुका कि तुम्हारे बिना नहीं जाऊंगा। अगर वली होता तो उसको भी ले चलता। अगर तुम्हें ऐतराज न हो.....

—नहीं, एतराज क्या होगा.....?

—तो चलो।

—मगर.....

—मगर क्या ? बताओ क्या बात है ? क्यों छुपा रही हो ?

—बात यह है कि मेरे पास कोई ऐसा कुरता नहीं जिसे पहन कर आप के साथ चलूं।

—बस इतनी सी बात। यह डिब्बा जो मैं लाया हूं, खोलो।

—अरे यह बुरका तो बहुत अच्छा है।

—तुम्हें इससे क्या, तुम यह देखो कि तुम्हें ठीक है या नहीं।

—ठीक क्यों नहीं, यह तो बहुत अच्छा है। आप इतना खर्च क्यों करते हैं ?

वली से कहूंगी कि जरा आप के कान गर्म करे।

—यह अखत्यार तो तुम्हें है। लो खींचो कान, मारो चपत।

जाहिद मुस्करा कर चुप हो रही और कपड़े बदलने चली गई। आज न जाने क्यों उसकी उमंगों में नये जीवन का संचार हो रहा था। वह नहाती रही, मुस्काती रही। नहान घर से बाहर आई तब भी उसके चेहरे पर, उसके होठों पर मुसकराहट थिरक रही थी। जब कपड़े बदल कर हनीफ के सामने आई तो उसने जेब से एक थैली निकाली और जाहिदा की ओर बढ़ाते हुये कहा—

—अब लिबास के साथ इन चीजों की जरूरत है। तुम इनसे क्यों महरूम रहो ?

जाहिदा ने हाथ में लेकर थेले में से चीजें निकालनी शुरू कीं—लिपस्टिक, पाऊडर, क्रीम, गालों की सुरखी, नाखून की सुरखी, बिन्दीया, सुरमा, इतर, बुन्दे और अंगूठी।

—हैं, यह सब क्या है ?

—क्यों, क्या तुम इनके इस्तेमाल के काबिल नहीं हो ?

—मगर मैं इनको इस्तेताल नहीं करना चाहती।

—क्यों किस लिये ? तुम कुआंरी तो हो नहीं। मियां जिन्दा हैं फिर डर किसका ?

—यह तो ठीक है मगर अदीब के सामने ही यह सारी चीजें ठीक हैं।

—तुम यह मोलवियों जैसी बातें न किया करो। अगर ऐसा ही है तो जंगल में बैठकर राम राम शुरू कर दो।

जाहिदा को हंसी आ गई और उसने दो साल बाद अपने चहरे को सुरखी और पाऊडर से निखार दिया।

जाहिदा न बनाव-सिंगार के बाद जब आईना देखा और अपने शरीर पर ऊपर से नीचे तक निगाह डाली। फिर उसने आइने से नजर हटा कर हनीफ को देखा तो हनीफ उसे एक टक देख रहा था।

दोनों एक साथ पहली बार आज घर से निकले। बाजार वालों ने देखा कि हनीफ का दांव बैठ गया और एक नई सोच में पड़ गये। दोनों सेनिमा पहुंचे, हाल में जा बैठे। हर तरफ जाहिदा के जिस्म से फूटी हुई खुशबूयें लपक रही थीं और लोगों की नजरें इस जोड़े पर उठ रही थीं। सेनिमा में फिल्म भी इतनी रोमान्टिक चल रही थी कि दोनों अपनी-अपनी जगह भावुक हो रहे थे। फिल्म खत्म हो गई। इन दोनों में एक नये फिल्म की शूटिंग शुरू हुई। दोनों की नजरें प्रेम की वाणी का अनुवाद तो करती थीं लेकिन जबान अभी गुंग थी।

दोनों घर आ गये। जाहिदा ने कपड़े उतारने का इरादा किया तो हनीफ ने कहा—जाहिदा अभी कपड़े न उतारो। सिर्फ हाथ मुंह धोकर दोबारा सिंगार कर लो।

—क्यों ?

—मेरी मरजी।

—अच्छा नहीं उतारती।

—जब जाहिदा रसोई घर की ओर बढ़ी तो हनीफ ने कहा—

—जाहिदा, वली को आज जाने दो, आज हम तीनों होटल से खाना खायेंगे।

हनीफ आज का सारा प्रोग्राम तै करके आया था। वली जिस डाक्टर के वहां काम करता था, वहां हनीफ की काफी पहुंच थी। हनीफ ने बड़े कम्पौन्डर से कह दिया था कि आज दूसरे शो में वली को जरूर ले जाये और किसी तरह उसका इन्कार न माने।

शाम को जब वली आया तो कहने लगा—

—बाजी, आज हमारे कम्पौन्डर साहेब जिद कर रहे हैं सेनिमा देखने चलो। जरा खाना जल्दी दे दो, उनके साथ जाना है।

—अगर जाना ही था तो छः वाला शो देख आते। अब रात को एक बजे तक अकेली कैसे रहूँगी ?

फौरन हनीफ बोल उठा—

—अरे जाहिदा तुम तो सिनेमा देख आईं। अब बली ने कौनसा कसूर किया है जो इसको रोकती हो। वली तुम पिकचर देख आओ, मुझे कालेज का कुछ काम करना है, घर न सही, यहीं कर लूंगा।

—मगर हनीफ, बाजी ने सिनेमा कब देखा ? वली चौंक गया।

—अरे भई, मैं इनके बड़ा सर होकर मेटनी शो ले गया था। यार, मुझे तो बेचारी पर बड़ा तरस आता है। हर वक्त सोच में पड़ी रहती हैं। न हंसना, न बोलना। अगर यह इनकी आदत रही तो बस दो बी हो जायेगी। और फिर यह भी तो औरत हैं। अगर अपने रख रखाव ठीक रखें तो अदीब खुरशीद और उसकी खूबसूरती भूल जायेंगे।

—हाँ हनीफ, यह तो ठीक है। मैं तो खुद इन से कहता हूं कि

हंसती बोलती रहा करो मगर न जाने यह क्यों अल्लाह से लौ लगाये चुप चाप बैठी रहती हैं।

—भई अली मैं तो जितना तुम्हें चाहता हू उतना ही इन्हें चाहता हूं। अब अगर तुम लोग मुझे बिलकुल पराया ही समझो तो दूसरी बात है।

—वाह भई, अजीब हैं आप भी! अरे हम खुद इस दुनिया में प्यार व मोहब्बत के भूखे हैं। फिर अपने पराये का क्या सवाल है?

—मैंने इसलिये कहा कि कहीं तुम ऐतराज न करो कि मेरे आये बिना सेनिमा क्यों ले गये? मैंने इन्हें बहुत अफसोस में देखा और दिल बहलाने की खातिर सेनिमा ले गये।

—अरे तो एतराज कौन करता है? ऐतराज तो गैर से किया जाता है तुम तो अब अपने हो गये।

इस तरह बात आई गई हो गई। होटल से खाना आया, खा लिया। अभी खाना खाकर बैठे ही थे कि कमपौंडर ने बाहर से आवाज दी और हनीफ चला गया।

बारह

अब हनीफ और जाहिदा अकेले थे। कुछ देर बाद हनीफ ने सिगरेट की ओर इशारा करते हुये कहा—जाहिदा, जरा सिगरेट जलाना।

—मुझे सिगरेट जलाने नहीं आता।

—जाहिदा, तुम भी इस दुनिया में क्या कर सकती हो। एक सिगरेट भी नहीं जला सकती। अच्छा, यहाँ आओ, मैं तुम्हें सिगरेट जलाना बताऊं।

हनीफ ने यह बात कुछ इस इन्दाज में कहा कि जाहिदा को इन्कार करते न बन पड़ा और वह पास आ गई। हनीफ ने सिगरेट उसके होठों से इस तरह लगाया कि उसकी अगुलियाँ जाहिदा की होठों से छू गईं। जाहिदा के चेहरे पर तमतमाहट आ गई और जब हनीफ ने माचिस जला कर जाहिदा से कहा कि सांस अन्दर लो तो सिगरेट उसके होठों से कांप कर गिर गई। दोनों ने एक दूसरे को देखा और मुसकरा दिये।

यह मुस्कान बड़ी रहस्यमयी थी, अपने अंक में भावनाओं का भंडार लिये!

हनीफ ने सिगरेट उठाया जलाया, और जाहिदा से कहा—लो पीआ।

—नहीं, मैं नहीं पीती, मुंह में बदबू हो जायेगी।

—बदबू नहीं खुशब हो जायेगी। मेरा मुंह सूंघ कर देखो, क्या बदबू आती है।

और जब जाहिदा ने हनीफ का मुंह सूंघने के लिये अपना चेहरा आगे बढ़ाया तो न जाने क्यों उसकी साँस इस कदर तेज हो गई कि वह उसका मुंह न सूंघ सकी और हारे हुये जूआरी की तरह अपने पलंग पर जा बैठी।

हनीफ नव उम्र जरूर था मगर उस थोड़ी सी उम्र में बहुत कुछ देख चुका था। वह बड़े ध्यान से जाहिदा के भावनाओं को पढ़ रहा था और अच्छी तरह समझ रहा था।

जाहिदा को घुरते हुये बोला—

—जाहिदा दिल की बात जबान पर न लाना बहुत बड़ा जुल्म है।

और जाहिदा जैसे चौंक कर कहने लगी—

—जी...जी...मेरे दिल में तो कोई बात नहीं।

—नहीं जाहिदा तुम छुपा रही हो। कुछ तो जरूर है। कह दो ना मेरी अच्छी जाहिदा। तुम क्या कहना चाहती हो ?

—नहीं, नहीं, हनीफ साहब, कुछ भी नहीं।

—सिर्फ हनीफ कहो।

—अच्छा, हनीफ ही सही मगर.....

—तुम मेरी जान की कसम खाकर कह दो कि तुम कुछ कहना नहीं चाहती।

—आप की जान कसम क्यों खाऊं। आप की जान पर मुझे क्या अखतियार है। हाँ अपनी कसम खाकर कह सकती हूं।

हनीफ ने जरा भावुक बनकर अदाकारी करते हुए कहा—जाहिदा, न मेरी जान मेरी है। न तुम्हारी जान तुम्हारी है। सच तो यह है कि तुम्हारी जान मेरी है और मेरी जान तुम्हारी। कहो हाँ।

जाहिदा ने गरदन झुका ली और उसके होंठ इस तरह खुल गये जैसे वह कह रहे हों—जी।

और इस ख्याल ने एक तूफान को जन्म दे दिया।

दोनों लहरों में टकराने और हचकोले खाने लगे। ज्वार भाटा धीरे धीरे कम हो गया और लहरें शान्त हो गईं।

वली फिल्म देखकर घर आया। हनीफ ने छुट्टी मांगी और अपने घर चला गया।

जाहिदा दोबारा उसी अंधेरे और घिनावने वातावरण को अपना चुकी थी। यह भूल चुकी थी फिछली फिसलन पर कुदरत के किस भयानक सजा का शिकार हो चुकी है।

वह इस गुनाह के रास्ते पर आगे बढ़ी जा रही थी और वली सब कुछ समझते हुए या तो अनजान बन रहा था या उसी रंग में रंगता जा रहा था।

कुछ दिन तो हनीफ का आना-जाना जारी रहा लेकिन फिर धीरे धीरे कम होता गया। शायद इसलिए कि अकरम की आमद ने उसे पीछे हटने पर मजबूर कर दिया था। जाहिदा हनीफ को कभी-कभी याद कर लेती और उसी तरह हनीफ भी मुहब्बत जता देता।

अकरम को जाहिदा से मोहब्बत हो गई थी। वह इस तरह कि एक दिन अकरम अपनी कार में एक होटल से काफी मंगवा कर पी

रहा था और उसकी कोहनी बाहर निकली हुई थी। हाथ में काफी की प्याली थी। जाहिदा उधर से गुजरी और अचानक उसका कंधा अकरम की कोहनी से टकरा गया। सारी काफी उसके कीमती सूट पर गिर गई। जाहिदा ठहर गई। अनजाने में बुरका उठाकर माफी चाही। अकरम देखता ही रह गया।

मुस्करा कर बोला अगर आप चेहरे से नकाब हटा कर माफी न चाहती तो शायद माफी देने के लिये मेरा दिल न चाहता।

जाहिदा ने घबरा कर चेहरे पर नकाब डाल ली। वली भी साथ था। उसने माफी चाही। अकरम ने कहा—अगर आप लोग घर जा रहे हों तो कार में आजाइये और माफी की शर्त यह है कि घर चल कर मेरा कोट धुलवाने के लिये पानी और साबुन का इन्तजाम करें।

वली के लिये इन्कार का कोई रास्ता नहीं था। दोनों कार में बैठ गये और जाहिदा पहली बार एक नफीस कार में घर आई। घर आकर जाहिदा ने अकरम से परदा न किया। बड़े चूलबुले ढंग से अकरम का कोट मांगा और अपने हाथों धोना शुरू किया।

कोट धुलने के बाद वली ने कहा—अकरम साहब बैठिये आप को काफी पिलाता हूं।

यह कह कर वह बाजार से काफी लेने चला गया। अकरम को जाहिदा से कुछ बेतुकी बातें करने का मौका मिल गया।

अकरम न केवल जवान और गठे बदन का था बल्कि शहर का काफी मालदार व्यापारी था। उसने काफी पी और चलते समय सौ रुपये का नोट जाहिदा की ओर बढ़ाते हुए कहा—यह कोट धोने का माविजा है।

—नहीं, नही, मैं नहीं लूंगी।

—क्यों, क्या बात है ?

—वाह, यह भी कोई बात हुई, एक तो कोट खराब हो गया और दूसरे यह सौ रुपये की चोट दूं।

—अरे साहब, ऐसे एक हजार कोट भी खराब हो जायें तो क्या है ? मैंने तो सिर्फ आप लोगों से राह व रस्म बढ़ाने के लिये इतना तूमार बाँध दिया। आप लोगों में प्यार भरा दिल देखा इसलिये तबीयत चाही कि जरा घुल मिल जाऊं वरना कोई बात नहीं थी।

वली ने कहा—हाँ, हाँ, साहब आप शौक से तशरीफ ला सकते हैं मगर इस तकलीफ की जरूरत नहीं।

अकरम ने जबरदस्ती नोट को जाहिदा के बातों में उलझाते हुए कहा—

—मगर इसका कबूल न करना मेरी दिल शिकनी होगी।

बात आई गई हो गई और वह चला गया।

थोड़ी देर बाद हनीफ आया और उसने पूछा—

यह कौन साहब आये थे ? और क्यों आये थे ?

जाहिदा ने जवाब दिया—

—अकरम साहब थे।

—कौन अकरम ?

—शहर के बड़े विजनेसमैन है।

जाहिदा ने सारा किस्सा सुनाया मगर सौ रुपये का जिक्र न किया। हनीफ को खटक गई कि अकरम का यहाँ आना, काफी पीकर जाना कुछ दाल में काला दिखाई देता है। वह चुप हो गया। कुछ देर बैठकर चला गया।

दूसरे दिन शाम के समय हार्न बजा।

वली अभी तक नहीं आया था। जाहिदा ने दरवाजे से झाँक कर देखा तो अकरम था। अन्दर बुला लिया।

अकरम ने बड़ी गहरी नजरों से जाहिदा को देखा। वह इस वक्त सारी का उल्टा पल्ला डाले हुए थी और यह अन्दाज हनीफ को बहुत पसन्द था। उसी ने यह सब सामान लाकर दिया था। मगर आज हनीफ के लाये हुए तीर अकरम के काम आ रहे थे।

अकरम ने सुन्दरता की बड़ी-बड़ी प्रतिमा देखी थी मगर जो बात इस जाहिदा के सौंदर्य में थी वह आज तक नजर न आई थी। वह सोफे पर आकर बैठ गया।

अब जाहिदा के मकान से दरिद्रता न टपकती थी। अमीरी का झलक झिलमिलाती थी।

जाहिदा अब फरमाइशें करने में माहिर हो गई थी। जब अकरम सोफे पर बैठ गया तो जाहिदा ने बूढ़ी नौकरानी से चाय बनाने का हुक्म दिया और फिर आकर बैठ गई। इतने में वली आ गया। अकरम और वली में बात-चीत होने लगी।

—भई वली, इस वक्त कहां से आ रहे हो?

—एक डाक्टर के यहाँ काम करता हूँ। इसी वक्त छुट्टी मिलती है।

—क्या मिलता है?

—अब तो नब्बे रुपये मिलते हैं।

—बस, इसमें तुम लोगों की गुजर कैसे होती है?

—अरे साहब, आप यह भी तो पूछिये कि जब मुझे तीस रुपये मिलते थे तब गुजर कैसे होती थी?

—यह तो बड़ा जुल्म है।

—मगर ख्याल कौन करता है जनाब ?

—बात क्या है ?

—कुछ हालात इस तरह डगमगाये कि पहले मेरे वलिद साहेब की मौत हुई और फिर वालदा भी चल बसीं। बाजी को ससुराल रास न आई और हमारे बहनोई छोड़कर चल दिये। धीरे-धीरे सब कुछ खत्म हो गया। मैं मैट्रिक में पढ़ रहा था। मुझे मजबूरन पढ़ाई छोड़नी पड़ी और इस नौकरी में आना पड़ा।

—खुदा ने वह वक्त गुजार दिया, शुक्र है उसका। बुरे हालत में मेरे एक दोस्त हनीफ ने बड़ा साथ दिया। दोस्ती का हक अदा किया। उन्होंने छोटे-छोटे विजिनस में मेरा पैसा लगाया और काफी मुनाफा दिया। हालत क्या थी और क्या हो गई।

—तुमने सचमुच बहुत तकलीफ उठाई। तुम अब डाक्टर की नौकरी छोड़ दो।

—नौकरी छोड़ दूं तो फिर क्या करूं ?

—मेरे पास जनरल स्टोर की मनेजरी करना। मन्जूर है ? कहो हाँ।

—अच्छा। जैसी मरजी आपकी।

—भई वली, बड़ा साफ आदमी हूँ मैं, यह पहले बता देना चाहता हूं कि फिलहाल मैं दो सौ रुपये दूंगा। इसके बाद तुम्हारी ईमानदारी और मेहनत का अन्दाजा लगाकर और भी बढ़ा दूंगा। इस तरह आपकी तमाम मुशकिलें खत्म हो जायेंगी।

—मैं किन अल्फाज में आपका शुक्रिया अदा करूं।

—शुक्रये की कोई बात नहीं। मैं दोस्त की हैसियत से यह सब कुछ कर रहा हूँ, मालिकाना तौर पर नहीं।

जाहिदा को सम्बोधित करके कहने लगा—

—आपकी कहानी बड़ी दर्दनाक है। अच्छा, वह क्या बात थी जिसकी वजह से आपके मियाँ ने आप पर सितम का यह पहाड़ तोड़ा।

जाहिदा ने मन मसोस कर कहा—

—बात क्या होती, बाजारी औरतों के हुश्न में फँस गये। एक बेसवा उन्हें अपने साथ लाहौर ले गई और फिर आज तक पता नहीं कि वह कहां हैं? क्या करते हैं?

—सच, साहब यह आपका ही दिल था कि इतनी सख्त वारदात को झेल गईं, वरना दूसरा होता तो न जाने क्या-क्या करता।

—अब अगर कुछ किया भी जाये तो किस लिए? खुदा का शुक्र है जब तक भइया है, मुझे खाने-पीने की कोई दिक्कत नहीं और यही औरत की मजबूरी है जिसकी वजह से औरत को मरदों की गलत-सलत बातों पर गरदन झुकानी पड़ती है।

—मगर मैं इस बात का कायल हूं कि मरदों और औरतों के बराबर के हकूक होने चाहियें।

—आप जैसे ख्यालात सब मर्दों के तो नहीं है।

—जहां तक मेरा ख्याल है यह हकूक बराबरी की हैसियत इसलिए नहीं रखते कि हमारी रहन-सहन और तौर-तरीके ने औरत को एक छुई-मुई का पौदा बना रखा है। न पढ़ाते हैं, न नौकरी करने देते हैं और न उसे अपने पैरों पर खड़ा होना सिखाते हैं। औरत बेबस होकर रह जाती है।

जाहिदा ने एक लम्बा साँस भरते हुए कहा—

—अगर आप जैसे सब मर्दों के ख्यालात हो जायें तो फिर रोना किस बात का है?

इतने में बूढ़ी नौकरानी ने चाय लाकर मेज पर रख दी।

अकरम ने चाय पीकर सेनिमा चलने की दावत दी। भला इन्कार किसे हो सकता था। तीनों सिनेमा पहुंच गये। बड़े प्रेम से सिनेमा में समय बिताया। प्रेम और विरह, मानवता और भिन्नता, इन सब विषयों पर बहस हो गई।

तेरह

जब यह तीनों वापस घर आये तो देखा, सारा घर साफ था सिवाये मुसहरियों और सोफों के कुछ नहीं था। यहां तक कि सिंगार मेजें भी गायब थीं। जब वली ने घबरा कर पड़ोसियों से मालूम किया तो पता चला कि बुढ़िया डंके की चोट पर सब सामान तांगे पर लदवा कर ले गई है। पूछने पर कहा कि वली मियाँ ने मकान बदल लिया है। वह लोग नये मकान में चले गये हैं।

जब वली ने जाहिदा को बतया तो उसकी आंखों में आंसू आ गये। एक आह भर कर कहने लगी—

—बड़ी बी ने हमें कहीं का नहीं रखा। सब कुछ समेट ले गई। अब क्या होगा बली ?

अकरम ने कहा—

—तुम पुलिस में रिपोर्ट करो मगर चोरी का बिल्कुल गम न करो। यह नुकसान मेरी वजह से हुआ है और मैं ही इसे पूरा करूंगा।

जाहिदा ने फौरन कहा—

—नहीं, नहीं, खुदा की कसम, आप बिल्कुल जिम्मेदार नहीं हैं। वाह ! यह भी कोई बात है !

अकरम ने बिना और बहस किये दोनों को गाड़ी में बिठा लिया, थाने पहुंच गया। शहर वाले उसके जानकार थे क्योंकि वह शहर का एक प्रतिष्ठित और धनी व्यक्ति था। पुलिस वालों ने रिपोर्ट लिखकर शहर की सारी चौकियों को फोन कर दिया।

अकरम इन दोनों को वापस ले आया और उनसे सिर्फ यह कहा—

—यह रात तो किसी तरह गुजार लें, इन्शाअल्ला कल सब बन्दोबस्त हो जायेगा।

अकरम चला गया। दूसरे दिन प्रातः पहुंचा। वली अभी सोकर उठा न था। जाहिदा उठ चुकी थी। अकरम ने कहा—वली को सोने दीजिये और मेरे साथ चलिये।

जाहिदा उसके साथ चली गई और तीन-चार घंटे बाद अपने गये हुए सामान से दुगना और कीमती सामान और एक नौकरानी लेकर घर आ गई।

अकरम विवाहित था और उसके एक बच्चा भी था। मगर न जाने क्यों वह जाहिदा की ओर बुरी तरह खिंचता जा रहा था।

हनीफ को यह बात बहुत बुरी लगती जब जाहिदा की जबानी वह यह सुनता कि अकरम साहब आये थे और फलां चीज लाये थे।

तीन-चार दिन बाद वली की पहली खादिमा, जामी पकड़ी गई और सारा माल वापस मिल गया। अकरम ने राय दी कि दूसरा मकान ले लिया जाए।

कहने की देर थी। दूसरा बड़ा मकान ले लिा गयया।

अकरम ने पहले पाँच साल का किराया पेशगी देने का इरादा किया मगर फिर कुछ सोचकर छः हजार में जाहिदा के नाम खरीद लिया।

अब तक इन तमाम बातों के होते हुए भी अकरम को साहस नहीं हुआ था कि अपने दिल की लगी को सुना सके। अपनी इच्छा की पूर्ति की बात करे। यद्यपि घंटों एकांत में बैठता और वार्तालाप का अवसर मिला था। मगर दोनों कुछ ऐसा तकल्लुफ बरतते कि मतलब की बात होठों पर आकर रह जाती।

जाहिदा अब उस मँजिल पर था जहां खुद मोहब्बत जताना घाटे और नुकसान की सूरत होती है। अतः वह चाहती थी वह अपनी तरफ से पहल न करे। अकरम खुद ही अपनी मनोकामना कहे और अकरम कुछ इतना खुददार था कि उसकी हिम्मत न होती थी।

उसने कभी किसी बाजारी औरत पर डोरे नहीं डाले थे। कभी कोई राह व रसम न रखा थी। लोगों का कहना ठीक था कि अकरम एक नेक और अच्छी चालचलन का इन्सान था। मगर यह वक्त की बात है कि वह जाहिदा पर बुरी तरह मर मिटा था।

वली ने मैनेजर की हैसियत से काम संभाल लिया था और बहुत अच्छी तरह निभा रहा था।

हनीफ ने नये मकान में आना बिलकुल छोड़ दिया था। यह जरूर था कि जाहिदा को हनीफ से थोड़ी या बहुत, बनावटी या दिली मोहब्बत थी। अकरम से गाढ़ी छनने पर भी कहीं न कहीं उससे मिलती रहती या घर बुला लेती।

अकरम को मिलते-जुलते दो माह बीत गये लेकिन दिल की बात दिल में ही रही। रात के बारह-बारह, एक-एक बजे तक जाहिदा के पास बैठा रहता मगर कुछ कह न सकता था।

इधर अकरम की बीवी परेशान थी कि क्या बात है कि अकरम देर से घर आता है और पहले जैसी बात भी नहीं ?

हनीफ के दोस्तों ने उसे भड़काना शुरू किया—वाह हनीफ, तुमने अपनी जिन्दगी उस लड़की के पीछे तबाह कर दी। घर की नजरों में भी गिर गये। सारा माल भी उस पर निछावर कर दिया। बाजार के भी कर्जदार हो गये और इस पर भी वह अकरम का पहलू गरमा रही है। आखिर तुम खामोशी से यह सब कुछ क्यों और कैसे देख रहे हो ?

हनीफ ने सोचा कि उसके दोस्त ठीक कहते हैं। वही जाहिदा जो मेरे बिना कल तक खाना न खाती थी आज अकरम की मोटर सजा रही है। उसके साथ घूमती-फिरती है और मुझे.....घास भी नहीं डालती।

कुछ सोचकर वह जाहिदा के पास आया, अकरम भी इतफाक से वहीं बैठा था। हनीफ ने उसकी परवाह न की और जाहिदा को दूसरे कमरे में बुला लिया।

—जाहिदा तुम जानती हो कि जो कुछ तुम कर रही हो इसका अंजाम क्या होगा।

—मैं कर क्या रही हूं जो अंजाम से डरूं ?

—तो फिर अकरम से यह राह व रस्म कैसे हैं ?

—हनीफ, तुम कसम ले लो अगर अकरम से मेरा कोई नाजायज लगाव हो।

—तो फिर वह हर वक्त तुम्हारे घर में क्यों रहता है ? उसने वली को आपने वहां मुलजिम क्यों रखा है ? उसके साथ तुम घूमती फिरती क्यों हो ?

—बात यह है कि उसके एहसानात भी हम पर कुछ कम नहीं हैं। यह घर उन्होंने मेरे नाम खरीद दिया है। वली को अच्छी नौकरी दे दी। यह सब कुछ उन्होंने इसलिये किया कि हमारी हालत सुधर जाये। अगर मैं उनके साथ बुरा सलूक करूं, आने जाने पर रोक लगा

हूं, कहीं उनके साथ न जाऊं तो तुम ही सोचो, उन पर क्या गुजरेगी ? मैं तुम्हारे ऐहसान आज तक उसी तरह मानती हूं जैसे पहले मानती थी और इसी तरह उनकी भी एहसानमन्द हूं।

—हूं, तो यह कहो जो तुम्हारे लिये दौलत का मुंह खोल दे वह तुम्हारा है। अगर अकरम से तुम्हारा कोई ममलब और वास्ता नहीं है तो यह सब कुछ उसने क्यों किया है ? शहर में और भी कई गरीब और मौहताज पड़े हैं अगर अकरम ऐसा ही गरीबपरवर है तो उन गरीबों का भला क्यों नहीं करता ? वह तुम्हारे लिये ही क्यों सब कुछ करता है ? देखो जाहिदा मुझे चूतिया न बनाओ। मेरे पास जो कुछ था तुम्हारी भेंट कर चुका हूं और अब तुम्हें किसी और के पहलू में बैठे नहीं देख सकता, तुम्हें कोई फैसला जरूर करना होगा।

—हनीफ तुम इस कदर जजबाती न बनो। गुस्से से क्या हासिल, जब मैं कह चुकी हूं कि अकरम से मेरा कोई नाजायज लगाव नहीं है जिससे तुम्हें तकलीफ पहुंचे। तो फिर क्यों तुम एसी बातें कर रहे हो। तुम मेरे लिये आज भी वही हनीफ हो जो कल थे।

—मगर अब यह बातें नहीं चल सकतीं। तुम एक मियान में दो तलवारें नहीं रख सकतीं। अगर अब तक अकरम से तुम्हारा कोई वास्ता नहीं है तो कल जरूर हो जायेगा। मैंने जमाना देखा है। मैं सब कुछ समझता हूं।

—तो आखिर तुम चाहते क्या हो ?

—बस यही कि तुम अकरम से राह व रस्म खतम कर दो। वह तुम्हारे पास न आया करे।

—अगर मैं कहूं कि यह बात नामुमकिन है।

—तुममें हिम्मत नहीं कि ऐसी बात कह सको। मैं तुम्हारी जबान गुद्दी से खींच लूंगा।

—हनीफ, मैं फिर कहती हूं कि तुम गुस्सा छोड़ दो। तुम्हें इस गुस्से का कोई हक भी नहीं।

—हक क्यों नहीं! मेरी दौलत तुम्हारे खून के हर बूंद में नजर आयेगी।

—तो हनीफ सुन लो! तुम अपनी दौलत के बदल बहुत कुछ हासिल कर चुके हो। अब तक मैं तुम्हारी एहसानमन्द थी मगर अब नहीं हूं। तुम जिद करते हो तो कहती हूं कि तुमने अपना पैसा अपना मकसद, अपनी मुराद पूरी करने के लिये खर्च किया और वह तुम हासिल कर चुके हो। मेरा तुम्हारा हिसाब साफ है।

—अच्छा तो तू इस कदर कमीनेपन पर उतर आई है। साफ क्यों नहीं कहती कि मैं बेसवा हूं। मुझे पैसे से मोहब्बत है, इन्सान से नहीं।

—तुम जो चाहो कहो। मगर याद रखो ये बातें मैंने तुम्हारी बेतुकी बातों के जवाब में कहे हैं।

—मैं खूब समझता हूं जाहिदा, यह तुम नहीं बोल रही हो, अकरम का पैसा बोल रहा है। याद रखो मजबूर इन्सान जिसकी मोहब्बत छीन ली गई हो, सब कुछ कर गुजरता है।

—मगर मैंने तुमको अपनी मोहब्बत से महरूम नहीं किया। तुमने आना-जाना खुद ही कम कर दिया था। मैं तुमको बुलवाया करती थी सिर्फ अपने दिल की तसकीन के लिये। वही मोहब्बत का बरताव बरता जो पहले बरतती थी। अगर मैं अकरम के आने-जाने से बदल जाती तो तुमको क्यों बुलाती?

—यह तो एक बेसवा के हथकंडे हैं जो तुमने खूब सीख लिये हैं।

जाहिदा गुस्से से बोली—बस हनीफ अब एक लफ्ज भी मुंह से न निकले, मैं सब कुछ सुन सकती हूं मगर अपने मोहब्बत की तौहीन नहीं सह

सकती मेरे पास इससे बड़ा कोई सबूत नहीं। जिसे तुम धोखा बता रहे हो। तो सुन लो आज से जाहिदा तुम्हारे लिए मर चुकी है। अब अगर उससे मिलने की कोशिश करोगे तो ऐसी रूहें पीछे पड़ जायेंगी कि तुम उनसे दामन न छुड़ा सकोगे।

—मैं रूह तो क्या, इससे भी बड़ी चीज को काबू में कर लेने की ताकत रखता हूँ, यह तुम्हें मालूम हो जायेगा। खैर इन बातों को छोड़ो। तुमको अभी मेरे साथ चलना होगा।

—कहां?

—जहां मैं ले जाऊं।

—मैं मजबूर हूं।

—तुम्हें जाना पड़ेगा।

—मैं नहीं जा सकती।

इन दोनों की बातें अब काफी तेज हो चुकी थीं। अकरम उनकी कड़ी-कड़ी बातों को सुन रहा था। वह वहाँ से उठा ताकि कोई घटना न घटने दे। उस कमरे में आया जहाँ दोनों बातें कर रहे थे।

दोनों कुछ देर के लिए चुप हो गये। अकरम ने जरा मुस्कराने का प्रयत्न करते हुए कहा—

—माफ कीजिये, मैं आप लोगों की बातों के बीच में आ गया हूं।

—जी हाँ, यह कड़ी और कड़वी बातें सिर्फ आपके आने के ही बदालत हैं किबला।

जाहिदा बोल पड़ी—

—हनीफ तुम अकरम से छेड़खानी न करो। गुस्सा थूक दो। घर जाकर ठंडे दिल से सोचो जो कुछ तुमने कहा, वह तुम्हें कहना चाहिए था या नहीं।

हनीफ ने तैश में आकर कहा—मक्कार, बाजारी औरत, आग लगाके ठंडा करती है!

हनीफ का यह कहना था कि अकरम ने आगे बढ़कर दो थप्पड़ जड़ दिए और फिर दोनों गुथमगुत्था हो गये। अकरम ताकतवर था, उसने हनीफ को नीचे गिरा लिया और सीने पर चढ़ बैठा।

जाहिदा से न रहा गया। बोल पड़ी—

—अकरम रहने दो, अल्लाह के वास्ते इनको छोड़ दो। इन्हें गुस्सा आ गया था, अब उतर जायेगा।

अकरम ने उसे छोड़ दिया और हनीफ खून का घूंट पीकर कमरे से बाहर निकल गया।

अकरम ने मामला पूछा तो जाहिदा फूट-फूटकर रोने लगी। आखिर अकरम ने यही अच्छा समझा कि गड़े मुर्दे न उखेड़े जायें और जाहिदा को तसल्ली देता रहा। आज पहली बार उसने जाहिदा के आँसू पोछने के लिए गाल पर हाथ लगाया था। जब जाहिदा चुप होकर बैठ गई तो अकरम ने कहा—

—जाहिदा तुम बड़ी कमजोर दिल औरत हो। जरा सी बात पर रोने लगीं।

—क्यों न रोऊं, मेरी किसमत ही ऐसी है। जिन लोगों को जरा-सा मुंह चढ़ा लो, वह बाजारी औरत कह जायें। मैं अब यहाँ नहीं रहूंगी। जहाँ जी चाहेगा चली जाऊंगी।

—यह क्या बच्चों की-सी बातें कर रही हो। अरे, लोगों की जबान कौन रोक सकता है? लोग तो नेहरू को भी बुरा कहते हैं।

—मगर पीठ पीछे। हनीफ ने तो सब कुछ मेरे मुंह पर कहा है। एक बेसहारा लड़की को दुनिया सब कुछ कह सकती है और वह उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकती।

—यह तुम क्या कह रही हो?

—ठीक कह रही हूं।

—जाहिदा अगर तुम कहो तो उसकी बतीसी बाहर निकाल दूं। उसका जबड़ा तोड़ दूं। तुमने छुड़ा दिया वरना मैं तो अक्ल ठिकाने लगा देता।

—मारने पीटने से क्या होता! मैं तो इस शहर में बदनाम हूं। यहाँ से अब चली जाना चाहती हूं। मैं यह नहीं चाहती कि दुनिया मुझे नफरत की निगाहों से देखे।

—आखिर तुम कहाँ जाओगी?

—जहाँ भी सींग समायेंगे।

—अगर तुम इस जिद पर अड़ी हो कि कहीं चली जाओगी तो याद रखो, तुम्हारे बिना अकरम की जिन्दगी बेकार हो जायेगी।

—मैं तुम्हें तो साथ ले जाना नहीं चाहती और न मजबूर कर रही हूं। मैं तन्वली तक को साथ न ले जाऊंगी।

—जाने का इरादा कहाँ है?

—इरादा बस यही है कि कहीं जाकर खुदकशी कर लूं। अगर यहाँ मरूंगी तो हवा उड़ेगी।

—देखो जाहिदा, इन बातों को दिल से निकाल दो। मुझे ऐसी बातें सुनकर बड़ी तकलीफ होती है। तुम नहीं जानतीं कि मैं तुम्हारे कितना करीब हो गया हूं?

—यह पास होने का ही नतीजा है जो हनीफ इतना सुना गया।

—आदमी आदमी का पहचानना भी जरूरी है। जो इतना उथला है, उसपर ख्याल न किया जाये, यही अच्छा है।

—मुझे अगर परखना ही आता तो रोना काहे का था?

—अच्छा, एक बात पूछने की हिम्मत कर रहा हूं अगर इजाजत हो।

—पूछिये।

—मेरे बारे में तुम्हारा क्या ख्याल है ?

—मेरे रवइये से जाहिर है, कहने की जरूरत नहीं।

—मगर तुम्हारा रवईया मेरे लिये आजतक पहेली बनी हुई है।

—वह कैसे ?

अकरम ने कुछ रुक कर कहा—

—मैं अपनी हैसियत इस घर में क्या समझूं ?

—आपकी हैसियत इस घर में ? यह तो घर ही आपका है।

—तो फिर मैं कौन हुआ ?

—घर वाला। जाहिदा झेंप गई।

—और तुम। अकरम तुरत बोला।

—कुछ भी नहीं।

—नहीं जाहिदा, कह दो कि तुम क्या हुई ?

आप मजबूर करते हैं तो कहे देती हूं कि मैं घरवाली.....

अकरम मुस्करा पड़ा—

—तो फिर हम दोनों क्या हुए ?

जाहिदा शरमा गई। अकरम ने जिद किया कि बताओ। आखिर जाहिदा को कहना ही पड़ा—

—वही आप जो कहलवाना चाहते हैं।

—तो मैं.....आज से जाहिदा को अपनी अमानत समझूं।

जाहिदा ने शरमा कर गरदन झुका ली और कह दिया—

—आपको अखतियार है।

अकरम यह सुनकर इतना खुश हो गया, मानो सारी दुनिया की की रंगीनियाँ मिल गई हों। वह सब कुछ पा गया हो और उसकी अभिलाषा पूरी हो गई हो।

दोनों एक-दूसरे से लिपट गये। छाती से छाती मिली, मिले होंठ से होंठ और.....

चौदह

अकरम और जाहिदा के रूमानी मिलाप का उद्घाटन हो चुका था। हनीफ प्रतिशोध की आग सीने में दबाये फिर रहा था, हनीफ को एक प्रतिद्वन्दी ने मारा था। यह बात उसके लिये और भी नासूर बन गई थी।

हनीफ उसी दिन लाहौर चला गया ताकि वह जाहिदा के मियाँ से मिल सके। बहुत ढूंढने के बाद आखिर वह अदीब के पास तक पहुंच ही गया। अदीब ने अपना नाम बदल दिया था और अब वह सेठ आबिद के नाम से मशहूर था।

उसकी हालत बदल चुकी थी। लगातार दो साल ठोकरें खाने के बाद वह इस लायक बन चुका था कि अपने को सेठ आबिद कह सके। अब वह शराब का भी आदी था।

कोठों पर जाकर बाजारी औरतों के मजे लेना उसकी आदत बन चुकी थी।

हनीफ का आबिद से सीधे मिलना और वह भी बिला वजह मुनासिब न था। इसलिये उसने अपने को लौंग और काली मिर्च का इम्पोर्टर बताया और कुछ ही दिन में खूब घुल-मिल गया।

इन दो चार दिनों में सारा खर्च हनीफ ने किया। आबिद इस

इस खर्चीले नवजवान से बड़ा प्रभावित हुआ और उसे कई दिन तक अपने यहाँ मेहमान रखा।

हनीफ ने चलते समय कहा—हमने आपका शहर घूम तो लिया अब आप भी दो चार दिन के लिये हमारे घर आइये।

—हां देखिये, अजीब बात तो यह है कि छः दिन हो गये, अब तक हमने यह भी नहीं मालूम किया कि आप का दौलतखाना कहाँ है ?

—अजी यह दिन ही ऐसे गुजरे कि जिक्र की नौबत ही नहीं आई। बहर हाल जो भी हो आपको आना तो जरूर पड़ेगा।

—मैं जरूर आऊंगा मगर अपना पता तो बताइये वरना कहाँ जाऊंगा ? कहां ठहरूंगा ?

—बस आप रावलपिंडी के भिन्डी बाजार.....

—जी, रावलपिन्डी ?

—जी हां, जी हां, मगर आप को हैरत क्यों हुई ?

—यार, मैं क्या बताऊं ? मेरे जीवन के दुख के दिन इसी इलाके में बीते हैं।

—अगर आप बुरा न माने तो एक बात कहूं।

—हां, हां, कहिये।

—मैंने पहली मुलाकात से यह अन्दाजा लगाया था कि आप शराब की कड़वी घूं में अपनी जिन्दगी की कड़ुआहट घोंट देना चाहते हैं।

—बस यही समझ लो।

—अगर आप को मुझ पर कुछ भी भरोसा है और मैं किसी काम आ सकता हूं तो मुझे खिदमत का मौका दें।

—दोस्त मुझे तुम पर भरोसा है।

—अगर भरोसा है तो मुझे अपना हाल भी बतायें।

—आबिद ने एक आह भर कर कहा—क्या सुनोगे मेरे दोस्त ! यह राज आज तक सीने में है। जब साँस लेता हूं तो सीने के घाव दुखते मालम होते हैं।

—यह बिलकुल ठीक है। राज का चर्चा न करना चाहिये मगर अपने दोस्तों से छुपाना भी अच्छा नहीं। मुमकिन है, मैं कुछ मदद कर सकूं।

—यह ठीक है, तुम मेरे दोस्त हो। मगर करूं क्या ? इस राज को खोलने में मेरा दिल दुखता हैं।

हनीफ ने धीरे से कहा—शायद मुझ पर भरोसा नहीं। अगर ऐसा है तो फिर मैं जोर नहीं देता।

—नहीं हनीफ, तुम दिल छोटा न करो। मैं सुनाता हूं।

आज लगभग ढाई साल बाद सिर्फ तुम को ही यह राज बता रहा हूं वरना किसी को यह नहीं बताया कि लाहौर से पहले मैं कहाँ रहता था। मेरे दोस्त मैं भी रावलपिंडी का रहने वाला हूं।

जब मैं मैट्रिक में पढ़ता था मुझे अपने पड़ोसी की लड़की जाहिदा से मोहब्बत हो गई। इत्तफाक से जाहिदा के वालिद बीमार हो गये और उनके इलाज वगैरा के सिलसिले में मैंने उन लोगों की बहुत मदद की।

इस तरह जाहिदा से मोहब्बत की पेंग बढ़ी और आखिर में हमने अपना घर छोड़ दिया और जाहिदा ने शादी कर ली और उसी के घर रहने लगा। लेकिन जाहिदा आवारा निकली। अपनी मां के मौत के बाद वह अपने सौतेले बाप से फंस गई और.....

और फिर हनीफ ने बड़ी देर तक अपना कच्चा चिट्ठा सुनाता रहा।

—उफ, बड़ी दर्बनाक है आप की कहानी। मगर अब तो आपको

रावलपिंडी में हमारे यहां आने में झिझक न होनी चाहिये। हमारे यहां आयेंगे तो आप का गम जरूर हलका हो जायेगा।

अब तुम्हें अखतियार है, बुलाओ या न बुलाओ।

नहीं जनाब मैं जरूर बुलाऊंगा और जब देखूंगा कि बाजार में कोई अच्छी गाने वाली आई है तो जरूर खत लिखूंगा।

—मेरा ख्याल है तुम मुझे नहीं बोलाओ तो अच्छा है।

—नहीं साहब आप को जरूर आना होगा।

—अच्छा, तुम्हारी मरजी।

इसके बाद हनीफ रावलपिन्डी लौट आया और समय की प्रतीक्षा करने लगा।

यहाँ अकरम और जाहिदा की गाड़ी छन रही थी। अब जाहिदा ने सोच लिया था कि हुस्न के दाम वसूल करो और इसी दृष्टिकोण से अकरम से फरमाईशों की भरमार थी। अकरम लुटता जा रहा था।

इधर हनीफ बदला लेने की ताक में था। उसने पहले आबिद से भेंट की थी अब एक हसीन लौंडिया जो एक बेसवा की लड़की थी, अकरम के पीछे लगा दिया था।

यह लड़की फातमा अकसर दूकान पर आती जाती। अभी अकरम ने इसे पूरी तरह देखा न था। एक दिन अकरम भी दूकान पर बैठा था। फातमा पहुंची। कुछ सामान माँगा और बुरका उलट दिया। अकरम पर बिजली गिरी। वह कुछ क्षण यूं ही देखता रहा। फातमा ने कुछ ऐसी चीज खरीदी कि अकरम को दिलचस्पी पैदा हो गई। जब फातमा ने बिल मांगा तो अकरम ने कहा—

—कोई बात नहीं, महीने पर हिसाब हो जायेगा। आप यहीं से अपनी जरूरत की चीजें खरीदा करें।

फातमा बड़ी होशियार थी। उसने फौरन सौ रुपये का नोट निकाल कर अकरम को दिया और कहा—यह मेरे हिसाब में जमा कर लीजिये। अब मैं यहीं से माल खरीदा करूंगी।

अकरम कोई जवाब न दे सका। नोट ले लिया। अब फातमा के लिये ज्यादा अच्छा अवसर था कि वह अकरम से रोजाना मिल सके और हुआ भी यही।

अकरम को फातमा से मोहब्बत हो गई और वह अब हर कीमत पर फातमा को पाने की कोशिश करने लगा।

जब वह फातमा के साथ घुमने-फिरने लगा तो जाहिदा को भी तालूम हो गया और वह अकरम की राह का रोड़ा बनने लगी। पहले तो अकरम ने नरमी से समझाया कि वह उसके बीच में न आये मगर जाहिदा वैसे चुप रहती। उसकी आमदनी बन्द हो रही थी। उसने अकरम पर दबाव डाला कि वह फातमा से न मिले मगर अकरम ने सख्ती से जाहिदा की इस बात को ठुकरा दिया तो जाहिदा हैरान हो गई। होते-होते नौबत यहाँ तक पहुंची कि अकरम ने वली को नौकरी से अलग कर दिया।

यही नहीं, जाहिदा के यहाँ से कीमती सामान भी जबरदस्ती ले गया। मकान जाहिदा के नाम था मगर वह भी मजबूरन अकरम के नाम करना पड़ा। इधर-उधर के बहाने से अकरम ने वह रकम भी जाहिदा से ले ली जो उसने जमाकर रखी थी और जब जाहिदा बिलकुल खाली हो गई तो उससे अलग हो गया। कुछ दिनों के बाद मकान खाली करने का भी नोटिस दे दिया और जाहिदा को फिर उसी छोटे से मकान को अपनाना पड़ा जिसको अकरम के कहने से छोड़ आई थी। थोड़ा सा घरेलू सामान बाकी रह गया था जो धीरे-धीरे

बिकने लगा, आखिर पेट तो भरना ही था। वली भी चुपचाप पड़ा रहता, नौकरी खोजने भी नहीं जाता था।

वली अपनी बहन के विषय में सब कुछ जानता था। उसकी आत्मा बार-बार उसे धिक्कार रही थी। एक दिन मजबूर हो कर उसने कह ही दिया—

—बाजी, अगर तुम इजाजत दो तो मैं कहीं बाहर जाकर नौकरी कर लूं।

—क्या तुम्हें रोटी नहीं मिलती जो नौकरी करोगे और वह भी बाहर जाकर। क्या तुम्हें यहाँ नौकरी नहीं मिलती ?

—नहीं बाजी, मैं इस शहर से तंग आ गया हूं। एक मिनट मेरा जी नहीं लगता।

—कभी नहीं, तुम मेरी सांसों के साथ रहोगे। मैं तुम्हें बाहर जाने की इजाजत नहीं दे सकती।

—मैं समझता हूं बाजी, तुम अकेली भी यहाँ रहोगी तो कोई तकलीफ़ न होगी। मैं जाते ही तुम्हें रुपये भेजूंगा।

—मुझे तुम्हारे रुपयों की जरूरत नहीं। मैंने कह दिया न, मैं नहीं जाने दूंगी। एक तुम्हारा ही सहारा दुनियाँ में बाकी रह गया है और तुम भी मुझे छोड़कर जाना चाहते हो।

—मगर बाजी अगर बुरा न मानो तो एक बात कहूं।

—कह, मना किसने किया है।

—बात यह है कि मुझे तुम्हारी हरकतें पसन्द नहीं हैं। इसलिए अच्छा तो यह है कि तुम किसी से विवाह कर लो।

—हूँ ! विवाह कर लो ! हरकतें पसन्द नहीं हैं। वली तुम्हें पता है कि हम कौन हैं और अब जमाने ने क्या कर दिया है। हम

फातमा बड़ी होशियार थी। उसने फौरन सौ रुपये का नोट निकाल कर अकरम को दिया और कहा—यह मेरे हिसाब में जमा कर लीजिये। अब मैं यहीं से माल खरीदा करूंगी।

अकरम कोई जवाब न दे सका। नोट ले लिया। अब फातमा के लिये ज्यादा अच्छा अवसर था कि वह अकरम से रोजाना मिल सके और हुआ भी यही।

अकरम को फातमा से मोहब्बत हो गई और वह अब हर कीमत पर फातमा को पाने की कोशिश करने लगा।

जब वह फातमा के साथ घुमने-फिरने लगा तो जाहिदा को भी तालूम हो गया और वह अकरम की राह का रोड़ा बनने लगी। पहले तो अकरम ने नरमी से समझाया कि वह उसके बीच में न आये मगर जाहिदा वैसे चुप रहती। उसकी आमदनी बन्द हो रही थी। उसने अकरम पर दबाव डाला कि वह फातमा से न मिले मगर अकरम ने सख्ती से जाहिदा की इस बात को ठुकरा दिया तो जाहिदा हैरान हो गई। होते-होते नौबत यहाँ तक पहुंची कि अकरम ने बली को नौकरी से अलग कर दिया।

यही नहीं, जाहिदा के यहाँ से कीमती सामान भी जबरदस्ती ले गया। मकान जाहिदा के नाम था मगर वह भी मजबूरन अकरम के नाम करना पड़ा। इधर-उधर के बहाने से अकरम ने वह रकम भी जाहिदा से ले ली जो उसने जमाकर रखी थी और जब जाहिदा बिलकुल खाली हो गई तो उससे अलग हो गया। कुछ दिनों के बाद मकान खाली करने का भी नोटिस दे दिया और जाहिदा को फिर उसी छोटे से मकान को अपनाना पड़ा जिसको अकरम के कहने से छोड़ आई थी। थोड़ा सा घरेलू सामान बाकी रह गया था जो धीरे-धीरे

बिकने लगा, आखिर पेट तो भरना ही था। वली भी चुपचाप पड़ा रहता, नौकरी खोजने भी नहीं जाता था।

वली अपनी बहन के विषय में सब कुछ जानता था। उसकी आत्मा बार-बार उसे धिक्कार रही थी। एक दिन मजबूर हो कर उसने कह ही दिया—

—बाजी, अगर तुम इजाजत दो तो मैं कहीं बाहर जाकर नौकरी कर लूं।

—क्या तुम्हें रोटी नहीं मिलती जो नौकरी करोगे और वह भी बाहर जाकर। क्या तुम्हें यहाँ नौकरी नहीं मिलती ?

—नहीं बाजी, मैं इस शहर से तंग आ गया हूं। एक मिनट मेरा जी नहीं लगता।

—कभी नहीं, तुम मेरी सांसों के साथ रहोगे। मैं तुम्हें बाहर जाने की इजाजत नहीं दे सकती।

—मैं समझता हूं बाजी, तुम अकेली भी यहाँ रहोगी तो कोई तकलीफ़ न होगी। मैं जाते ही तुम्हें रुपये भेजूंगा।

—मुझे तुम्हारे रुपयों की जरूरत नहीं। मैंने कह दिया न, मैं नहीं जाने दूंगी। एक तुम्हारा ही सहारा दुनियाँ में बाकी रह गया है और तुम भी मुझे छोड़कर जाना चाहते हो।

—मगर बाजी अगर बुरा न मानो तो एक बात कहूं।

—कह, मना किसने किया है।

—बात यह है कि मुझे तुम्हारी हरकतें पसन्द नहीं हैं। इसलिए अच्छा तो यह है कि तुम किसी से विवाह कर लो।

—हूँ! विवाह कर लो! हरकतें पसन्द नहीं हैं। वली तुम्हें पता है कि हम कौन हैं और अब जमाने ने क्या कर दिया है। हम

भूखे मरते थे, समझे, किसी ने हमारे साथ हमदर्दी की एक बात न की मगर जब जमाने की फितरत को हमने समझ लिया तो सारे सर हमारे सामने झुक गये। तुम कहते हो निकाह कर लूं मगर किस तरह? तुम्हारे दूल्हा भाई, जब से छोड़कर गये हैं आज तक कोई खबर न ली। अब जब तक तलाक न दे दें मैं निकाह कैसे कर लूं? मेरे पास न कोई जायदाद है न जेवर जो इज्जत की जिन्दगी बसर कर सकूं।

—मगर जिन्दगी तो उस वक्त भी इज्जत से गुजर रही थी जब आप डिप्टी साहब के यहां काम करती थीं और मैं डाक्टर के वहाँ तीस रुपये में नौकर था।

—और उसका अंजाम तुमने नहीं देखा। मैं वहाँ जिन्दगी गुजार देती, अपनी हड्डियाँ सुरमा बना देती। मगर हविस के कुत्तों ने वहाँ भी मेरा पीछा न छोड़ा और एक इज्जतदार बेकस लड़की को पुलिस के हवाले कर दिया।

—अच्छा बाजी, क्या यह मुमकिन नहीं कि मैं नौकरी करूं और तुम एक बार फिर इज्जत वाली जिन्दगी गुजारने लगो।

—मुझे कोई ऐतराज नहीं। मगर मेरा तजरबा बता रहा है कि कोई औरत इस दुनिया में इज्जत से रहना भी चाहे तो जमाना दस फितने उठा कर उसे गुमराह कर देगा। मैं अब जमाने को यह मौका नहीं देना चाहती।

पन्द्रह

वली बहन की बातें सुनकर चुप तो हो गया मगर इन बातों से सन्तुष्ट न हो सका। वह इस गन्दे वातावरण से निकलना चाहता था। दो चार दिन उसने शहर में इधर उधर घूमने और रुपये इकट्ठा करने में बिता दिये और पांचवें दिन रात को अपनी बहन के नाम एक पत्र लिख कर सिंगार मेज पर रख दिया और घर छोड़ दिया।

सवेरे जाहिदा सोकर उठी, मुंह धोया, बाल सवारने आई तो सिंगार मेज पर खत पड़ा देखा। वह पहले ही वली को न पाकर ही हैरान थी। खत ने तो उसका होश गुम कर दिया। कांपते हाथों से खत खोला और पढ़ा।

प्यारी बाजी !

सलाम

मैं बहुत मजबूर होकर आज तुम से अलग हो रहा हूँ। इरादा तो यही है कि कभी न मिलूं मगर जमाना अगर मिला दे तो यह एक इत्तफाक होगा।

बाजी, मेरी अच्छी बाजी, मैं तुम्हें छोड़कर जो दर्द महसूस कर रहा हूं वही दर्द तुमको भी महसूस होता होगा। भाई-बहन

का रिश्ता तो खून का रिश्ता है जो हर हालत में लगा रहता है। मैं कह नहीं सकता मैं तुमसे अलग होकर रह भी सकूंगा या नहीं। तुम मेरी बहन ही नहीं हो; माँ भी हो। तुमने मुझे पाला-पोसा है, बड़ा किया है। समझ-बूझ दी है। मगर उफ, बाजी यह समझ नहीं आती तो अच्छा था। नासमझी में तो इन्सान सब कुछ सह लेता है मगर समझ आने के बाद अक्ल का बन्दी हो जाता है। दिल की आवाज पर चलता है। तुमने नेक और पाक साफ जिन्दगी को अन्धेरे, घिनावने और गन्दे माहोल के सुपुर्द कर दिया है जिसकी बदबू से मेरा दिमाग फटा जा रहा है।

तुमने सारी मुसीबतें अपनी करनी से मोल ली हैं। कुदरत ने तुम्हें संभलने का कई बार मौका दिया मगर तुम चाहती तो सुधर सकती थीं।

मैं तुमसे आखिरी बार सिर्फ गुजारिश ही कर सकता हूं कि बाजी इस गंदे और सड़े रास्ते को छोड़ दो। अगर तुम ऐसा करोगी तो हो सकता है मैं तुमसे जल्दी मिल सकूं वरना तुम अपनी जबान पर वली का नाम न लाना। समझ लेना, माँ-बाप के साथ यह भी मर गया।

एक सौ रुपया तुम्हारे खर्च के लिये छोड़ रहा हूं।

तुम्हारा बदनसीब भाई

वली

जाहिदा पत्र पढ़ कर सुन्न हो गई। सर पकड़ लिया। चारपाई पर बैठ गई।

हनीफ का बदला अपना रंग लाना शुरू कर चुका था। वह जाहिदा को अकरम से अलग करा चुका था। मुफलिस और परेशान

कर दिया था, मगर अकरम से पूरी तरह बदला न लिया था। फातमा ने अपने पंजे पूरी तरह गाड़ लिये थे और अकरम इनमें पूरी तरह फंस चुका था।

अभी यह सब कुछ शुरूआत थी। फातमा ने मकान बदल लिया था। ताकि अकरम को शुबहा न हो कि वह एक बेसवा की लड़की है। फातमा के इस नये मकान को भी अकरम ने उसी तरह सजा दिया था जैसे जाहिदा का सजाया था बल्कि उससे अच्छा। फातमा ने सब से बड़ा धोखा यह दिया था कि अकरम को केवल बहाने बना बना कर दूर रखा था और छल और कपट के खेल खेल रही थी।

अकरम अपनी मोहब्बत उससे जता चुका था मगर फातमा ने उसका जवाब इस तरह दिया कि न तो उसे कुछ आशा ही बंधी और न निराश ही हुआ। अकरम रात को फातमा के घर ही रहता मगर क्या मजाल कि फातमा से चूक हो जाये। वह अपने कमरे को बन्द करके अकेले सोती और अकरम तमाम रात सपनों से जी बहलाता।

फातमा जो कुछ अकरम से ले पाती, अपनी मां के पास भेजवा देती। सारे गहने भेज दिये और अकरम से कह दिया कि एक गरीब सहेली की शादी में वह गहने उसको दे दिये। अकरम कुछ न कह सका, और बनवा दिये।

एक दिन फातमा ने अकरम से फरमाइश की कि अगर तुम्हें सचमुच मुझ से मोहब्बत है और मुझ से शादी करना चाहते हो अपना मकान और दुकाने मेरे नाम कर दो। अकरम जरासे इशारे पर जान निछावर करने को तैयार था।

दूसरे ही दिन अकरम ने सारी जायदाद फातमा के नाम कर दी

मगर एक शर्त रखी कि अगर फातमा ने उसके साथ सादी न की तो वह मलकियत से महरूम होगी।

फातमा इस शर्त पर बिगड़ गई। कहने लगी—तुम मुझे खरीदना चाहते हो तुमने मेरा मजाक उड़ाया है। उठा लो यह कागजात और आग लगा दो इनको।

—जरा सी बात पर इतने खफा हो गईं।

—जरा सी बात का क्या मतलब? मुझे न जायदाद चाहिये और न मैं शादी करूंगी।

—मगर मुझे तो यकीन हो जाये कि मैं अपना सब कुछ खोकर तुम्हें पा जाऊंगा।

—मुझे यह यकीन नहीं दिलाती।

—तो फिर मैं क्या करूं?

···जो जी में आय करो। मुझे तुम से हमदर्दी की इसी लिए ऐसा कहा था।

—खैर यह तो मैं जानता हूं तुम्हें मुझे हमदर्दी ही नहीं, मोहब्बत भी है। मगर मैंने यह सब कुछ सोच समझ कर ही तो किया था।

—किया होगा, जायदाद अभी तुम्हारे पास ही तो है।

—अच्छा चलो, मैं यह शादी की शर्त निकाले देता हूं। अब तो खुश हो कहो, हां। औ यह तो बता दो शादी कब और किस दिन होगी।

—मैं कह चुकी हूं, शादी की शर्त इस जायदाद के साथ नहीं है। फिर बता दूंगी।

आखिर अकरम ने मजबूर होकर शादी के शर्त के बिना तमाम जायदाद फातमा के नाम कर दी। अदालत से यह दोनों लगभग चार बजे छुट्टी पाकर घर आये। फातमा ने कागजात अपनी मां के पास पहुंचा दिए।

मैं रात के दस बजे लाहौर जाना चाहती हूं ताकि अपनी मां से शादी के बारे में बात चीत कर सकूं।

—अच्छा, तो तुमने अब तक मुझ से यह क्यों छुपाया कि तुम्हारी माँ लाहौर में हैं।

—छुपाने में कुछ भेद था। तुम क्या मुझे अनाथ समझे समझे हुए थे।

—खुदा न करे, बहरहाल चलो मैं भी चलता हूं।

—मैं तुम्हें साथ नहीं ले जा सकती।

—क्यों ?

—यह मेरे खानदानी रिवाज के खिलाफ है कि अपने होने वाले शौहर को साथ लेकर जाऊं।

—तब यह जुदाई की घड़ियां कैसे कटेंगी ?

—बस कल रात को वापस आजाऊंगी।

अकरम को इजाजत देनी ही पड़ी। फातमा ने जरूरी सामान और बिस्तर बांधा। चलने के लिये तैयार हो गई।

अकरम ने पूछा—वह कागजात तुमने कहाँ रख दिये।

—मैंने ठीक से रख दिये हैं तुम्हें उनकी क्यों फिक्र है।

—इसलिये कि वह कागजात बहुत जरूरी हैं। उनको संभाल जरूरी है। मेरी पुरानी दस्तावेजें भी उनके साथ हैं।

—सब ठीक है, मैंने उन्हें हिफाजत से रख दिया है।

फातमा को रुपया रखते देख कर अकरम नजरें बचा गया। इन तमाम रातों से अकरम का शक बढ़ने लगा। उसने फातमा से जिद की कि वह कागजात दिखाये, वह कहां रखे हैं।

फातमा ने गुस्से से काम लिया और आपे से बाहर होने लगी।

अकरम समझ गया, यह एक चाल थी जिसमें फातमा कामयाब हो गई है। अब सब कुछ लेकर भाग जाना चाहती है।

अकरम ने पहली बार हिम्मत से काम लेकर फातमा का सन्दूक खोला और दस हजार रुपये निकाल अपने सन्दूक में रख लिये। फिर उसका तमाम जेवर भी उतार कर रख लिया और फातमा से कहा—आज तू कहीं नहीं जा सकती। आज मेरी इच्छाओं की पूर्तिकी रात है।

जब फातमा ने देखा कि अकरम की नीयत खराब है और आज नहीं छोड़ेगा तो उसने शोर मचाता शुरू किया। बाजार वाले जमा हो गये और पुलिस ने दोनों को हिरासत में ले लिया।

फातमा ने इलजाम लगाया कि अकरम उसकी असमतदरी करना चाहता है। मगर फातमा की यह बात पुलिस वालों ने न मानी, क्योंकि एक तो वह अकरम को जानते थे, दूसरे पुलिस-इन्सपेक्टर अकरम से भली-भाँति परिचित था। जब इन्सपेक्टर ने अकरम को बताया कि यह उस शहर के एक बेसवा की लड़की है तो अकरम सर पकड़कर बैठ गया। उसकी आँखों के सामने तारे नाचने लगे। वह अपनी सारी जायदाद फातमा के नाम करके अपना हाथ काट चुका था। उसने कुल घटना इन्सपेक्टर को बताई। इन्सपेक्टर हैरत में आ गया। आप फातमा के खिलाफ फरेबदेही की रिपोर्ट लिखा दें। जायदाद की रजिस्ट्री आज ही हुई है। आज ही यह घटना घटी है। अदालत को आप यह साबित कर सकेंगे कि इस लड़की ने आपको धोखा दे कर जायदाद अपने नाम करा ली है।

अकरम ने ऐसा ही किया। फातमा को छोड़ दिया गया क्योंकि अभी कोई जुर्म उस पर साबित नहीं होता था। उसे अदालत ही सजा दे सकती थी। अकरम की आंखें अब खुल चुकी थीं। वह अपनें बीवी-बच्चों को वापस लाया।

सोलह

अकरम का अब खयाल था कि उसने जाहिदा के साथ ज्यादती की है। वह जाहिदा के घर पहुंचा। जब उसने जाहिदा का दरवाजा खटखटाया और आवाज दी तो जाहिदा को यकीन न हुआ कि अकरम हो सकता है।

जाहिदा उलझन में थी कि दरवाजा खोले या न खोले। अगर दरवाजा खोलती है तो फिर उसी घिनावनी जिन्दगी की ओर बढ़ेगी। वली की बात सच दिखाई देती है अगर न खोले तो मोहब्बत के घाव रिसते हैं। वह कुछ साइत सोचती रही और फिर अपने-आप उसके हाथ जंजीर की ओर बढ़े। द्वार खुल गया।

अकरम जाहिदा को देखकर आंसू भर लाया। जाहिदा की भी आँखें सूजी हुई थीं। बाल बिखरे हुए थे। उतरा हुआ चेहरा और मैले कपड़े उसकी बदहाली का सबूत दे रहे थे।

अकरम ने जाहिदा को अपनी गोद में खींचते हुए कहा—

—मेरी जाहिदा, मुझे माफ कर दो। मैं बहुत लज्जित हूँ। मुझे क्या मालूम था कि तुम्हारी यह हालत हो जायेगी। अब मैं तुम्हें छोड़कर कहीं नहीं जाऊंगा।

और जाहिदा इसके जवाब में इस कदर रोई कि हिचकी बंध गई।

अकरम के आँसू भी गिरते रहे। कुछ देर बाद तबियत हल्की हुई तब अकरम ने सारा माजरा सुनाया। जाहिदा ने सारी कहानी सुनकर कहा—वह जाहिदा नहीं है कि अकरम साहब के जरा से कहने पर फिर उनके नाम मकान कर दे।

—मुझे अब मालूम हुआ है कि पेशेवालियों में और शरीफ लड़कियों में क्या फर्क है। तुमने मेरी हर चीज वापस कर दी। अगर तुम ऐसा नहीं करती तो कानून भी ये चीजें तुमसे वापस न दिला सकता था। मगर उफ, मुझ पर कैसा जुल्म हुआ है। फातमा ने मुझे निचोड़ कर रख दिया है। सारी पूंजी हजम कर गई। अब मेरे पास न नकद रुपया है, न स्टोर्स है, न जायदाद है।

जाहिदा यह सब कुछ सुनकर चुप हो गई। फिर अकरम के बहुत कहने से वली का खत ले आई और उसे दे दिया। अकरम ने खत पढ़ा एक ठंडी साँस ली और कहा—

हूँ, तो वली ने साथ छोड़ दिया। खैर, तुम फिक्र न करो। मेरे पास दस हजार रुपये और जेवरात मौजूद हैं। अब तुम्हें कोई तकलीफ न होगी और इन्शाअल्ला तुम्हारी जिन्दगी भी गंदे माहौल में न बीतेगी।

—क्या मतलब ?

—यही कि मैं इस मुकदमे से निपट कर तुमसे शादी कर लूंगा।

जाहिदा ने गर्दन झुका ली और कुछ सोचने लगी। फिर अकरम से कहा—

—मेरे लिये अब सिवाय खुदकशी के दूसरा रास्ता नहीं है।

—तुम इतना दिल क्यों छोटा करती हो ?

—माफ करना अकरम, आज जब तुम्हें जमाने ने सताया तो मेरे

पास चले आये वरना तुमने यह भी न पूछा कि रोटी खा ली है या नहीं।

—मैंने तुमसे माफी माँग ली है। अपने किये पर शर्मिन्दा हूं अब और ज्यादा शर्मिन्दा न करो।

—अकरम मैं तुम्हें कुछ नहीं कहती मगर यह बताना चाहती हूं कि मेरी बेबसी अजीब सी है। अब मेरे सामने कई ऐसे सवाल चक्कर लगा रहे हैं जिन्होंने मुझे पागल बना दिया है। मैं तुमसे दूर हो गई थी तो किस्मत की बदनसीबी पर सब्र आ गया था। तुम फिर आ गये और वली का कहना कि मैं घिनावनी जिन्दगी न बिताऊं।

—देखो जाहिदा, तुम इन उलझनों में न पड़ो वरना तुम्हारी परेशानियाँ और बढ़ जायेंगी। जबतक तुम्हारा शौहर नहीं आयेगा, मैं तुम्हें अकेला नहीं छोड़ूंगा। रहा वली, तो उसे जब मालूम होगा कि मैंने तुम्हें अपना लिया है तो वह जरूर वापस आ जायेगा। उसे मेरी शराफत पर भरोसा है।

—सब कुछ सही, मगर तुम फिर मुझे काँटों में घसीटना चाहते हो। अगर तुम्हें मुझसे हमदर्दी या मोहब्बत है तो मेरा एक काम करोगे?

—एक नहीं दो।

—तुम्हारी बीवी बच्चे तो घर आ गये हैं न?

—हाँ, आज ही उन्हें लाया हूं।

—तुम्हारे पास नौकरानी है कोई?

—नहीं कल परसों तक आ जायेगी।

—बस, तो अकरम मुझे अपने यहाँ नौकर रख लो। मैं तुम्हारे बीवी बच्चों की खिदमत करूंगी। जो भी कुछ दे दोगे मंजूर है।

—जाहिदा तुम्हें क्या हो गया है ?

—मैं अब गुनाह की जिन्दगी गुजारने के लिये हरगिज तैयार नहीं हूं।

—तुम्हें कौन कहता है ?

—अकरम, तुम देखते हो, वली के चले जाने से मेरा क्या हाल हो गया है। मैं वली को हर कीमत पर बुलाना चाहती हूं। मैंने उसे माँ की तरह पाला पोसा है। मुझे अपने बच्चे का अफसोस नहीं था मगर वली के जाने का अफसोस है। मुझे यह सारी दुनिया तारीक और भयानक दिखाई दे रही है।

तुम गुनाह की जिन्दगी से बचना चाहती तो मैं तुम्हारा साथ देता हूँ और वादा करता हूँ कि तुम्हारी तरफ कभी बुरी नजर से न देखूंगा।

—मगर मैं तो मेहनत करके खाना चाहती हूँ। मैं तुम्हारे घर का काम करूंगी।

—लेकिन तुम ऐसा क्यों नहीं करती हो ?

—अकरम, मुझे मौका दो इज्जत से जिन्दगी गुजारने का।

तुम्हारी यह जिद मेरी समझ से बाहर है। तुम खुद जरा सोचो जिसे कल मैं महबूबा बनाकर आँखों में बिठाता था उसे आज किस तरह घर की नौकरानी बना दूं ?

—अगर तुम मुझे नेक जिन्दगी गुजारने का मौका देना चाहते हो तो तुम्हें ऐसा करना ही होगा।

—मैं तुम्हारा कहा करने को तय्यार हूँ मगर यह बात अच्छी नहीं मालूम होती।

—तुम्हारा यह काम तुम्हें तुम्हारे पिछले गुनाहों से छुटकारा दिला देगा।

—अच्छा तो एक शर्त है।

—कहो।

—एक नहीं बल्कि दो।

—दो नहीं बल्कि तीन कहो। जाहिदा के चहरे पर मुस्कान आ गई।

—पूरी करोगी ?

—सब पूरी करूंगी लेकिन गुनाह के रास्ते पर ले जाने वाले न हों।

—नहीं, नहीं ऐसी नहीं ?

—तो फिर कहो कहते क्यों नहीं ?

—अच्छा सुनो। तुम कभी मैले-कुचैले कपड़ों मे, बिना बनाव सिंगार किये नहीं रहोगी। डेढ़ सौ रुपये माहवार मिला करेगा। तुम्हें खाना हम सबके साथ खाना पड़ेगा।

—नहीं, नहीं यह नहीं होगा।

—वह क्यों ?

—क्योंकि तुम्हारी शर्तें एक मुलाजिम के लिए नहीं हैं।

—देखो जाहिदा अगर तुमने ज्यादा हुज्जत की तो तुम्हें नौकरी नहीं दूंगा। अच्छा यही है कि मैं कल सुबह में आ जाऊंगा। मेरे साथ घर चली चलना।

मजबूर जाहिदा को ये शर्तें मान लेनी पड़ीं और अकरम चला गया।

दूसरे दिन अच्छे-अच्छे कपड़े लेकर अकरम जाहिदा के पास आया—

जाहिदा ने उन कपड़ों को देखकर कहा—

—आपने फिर वही किया है ?

—मैंने तो कुछ भी नहीं किया।

—भला इन कीमती कपड़ों को पहन कर मैं आपके घर जाऊंगी तो बीवी क्या कहेगी। यह कपड़े भला किसी नौकरानी के हो सकते हैं ?

—ज्यादा बोलने की जरूरत नहीं। इसका मैं जिम्मेदार हूं। तुम कपड़े बदल डालो।

जाहिदा ने कपड़े बदल दिये। वह एक बार फिर जाने बहार बन गई। उसकी सुन्दरता एक बार फिर झलकने लगी। अकरम उसे देख कर मुस्कराया और आँखें नीची कर लीं।

जाहिदा झेंपते हुए बोली—आप हंस क्यों रहे हैं ?

—मगर मैंने झुका लीं। शर्त यही थी कि मैं तुम्हें बुरी नजर से नहीं देखूंगा।

जाहिदा मुस्करा दी और मकान को ताला लगाकर अकरम के साथ उसके घर पहूंची। अकरम की बीवी रजिया ने दोनों को हैरत से देखा। वह समझी फिर नई आफत आई। मगर फौरन ही अकरम ने रजिया से कहा—रजिया, इनसे मिलो, यह हैं मेरे दोस्त अजीज की बीवी। बेचारी बहुत परेशान हैं। मैं इन्हे यहाँ लाना चाहता था मगर जबतक कुछ शर्तें मनवा न लीं उस वक्त तक मेरे साथ चलने में राजी न हुईं।

रजिया ने मुस्कराकर कहा—बड़ी खुशी हुई मिलकर। मगर वह शर्तें क्या थीं ? यह घर भी तो इन्हीं का है।

—इनके शौहर कई साल से लापता हैं। यह नौकरी के लिए एक जगह गई हुई थीं। मैं भी वहीं बैठा था। नें इन्हें घर ले आया हूं मगर इस शर्त पर कि यह तनख्वाह लेंगी, काम करेंगी और खाना हमारे साथ खायेंगी।

—अरें वाह आप भी खूब हैं। इन्ह जितने रुपये की जरूरत हो

ले लें। मगर नौकरानी की हैसियत से एक दोस्त की बीबी को घर लाते आप को ख्याल न आया।

—मैंने तो लाख कहा, मेरा घर तुम्हारा अपना है मगर यह न मानीं। आखिर मजबूर होकर इन्हें इस हैसियत से लाना पड़ा। यह और नहीं ठोकरें खातीं। जमाना वैसे ही खराब है।

—नहीं, नहीं, मैं घर का काम इन्हें नहीं करने दूंगी। वाह यह भी कोई बात है।

जाहिदा बीच में ही बोल पड़ी—बहन, तुम्हारी मोहब्बत का किस तरह शुक्रिया अदा करूं मगर मैंने अपने शौहर से कसम खाई थी कि अगर जरूरत पड़ी तो मैं मेहनत मजदूरी करके गुजारा करूंगी।

—हां, हां, सब मेहनत ही है।

—नहीं रजिया बहन, अगर आपने मेरी बात न मानी तो मैं अभी वापिस चली जाऊंगी।

अकरम बोल पड़ा—रजिया, यह बहुत जिद्दी हैं। इनसे बहस न करो। अच्छा जाहिदा तुम सामने वाले कमरे में कब्जा जमाओ और काम करो। चलो बस किस्सा निपटा।

जाहिदा और रजिया मुस्करा दीं। रजिया जाहिदा के साथ गई और एक सजे सजाये कमरे में उसके कपड़ों की अटैची रख दी।

रजिया कहने लगी—जाहिदा बहन, मुझे बड़ी खुशी है। यह तो दिन भर बाहर रहते हैं, रात को भी देर से आते हैं और मैं किसी से बात करने को तरसती हूं। आज मुझ परवाह नहीं चाहे रात को जिस वक्त आय।

—अजी बात, जरा देर से आकर देख तो! मर्दों का रात को गायब रहने का क्या मतलब। दिन तो खैर काम में गुजर जाता है।

रजिया ने एक ठंडी साँस लेते हुए कहा—तुम्हें क्या पता बहन इनकी क्या हालत हो गई है। अभी कुछ ही दिन हुए अपनी सारी

पूंजी एक बेसवा को सौंप दी। अब चलेगा जब कोई फैसला होगा। अब नाम रह गया है, दौलत तो खत्म हो चुकी है।

—अच्छा! जाहिदा हैरत से बोली—तो अकरम साहेब का यह हालत हो गई है। आवारा भी हो गये हैं।

—क्या बताऊं बहन! मेरे दिन बड़े अराम से कट रहे थे और यह किसी तरफ नजर उठा कर भी न देखते थे। मगर पता नहीं किसी ने क्या जादू कर दिया कि यह ऐसे हो गये। मैं भी कल ही मैके से आई हूं। मुझे तो छोड़ ही दिया था।

—तुम फिक्र न करो बहन, अगर मेरी जान में जान है तो देखूंगी कि यह नौ जजे के बाद बाहर कैसे रहते हैं।

—मगर जाहिदा बहन, यह तो बड़े जिद्दी हैं। किसी की नहीं मानते, बस जो दिमाग में आ जाये उसे पूरा करके ही रहते हैं। क्या मजाल जो किसी का कहा मान लें।

—अच्छा, देखूंगी बहन।

—खुदा करे बहन, यह तुम्हारे कहने से मान जायें।

इतने में अकरम आ गया और कहने लगा—क्या क्या बगावत हो रही है मेरे खिलाफ!

रजिया ने मुस्करा कर कहा—करफ्यू लगा देने का इरादा है जाहिदा बहन का। कहती हैं मेरे सामने नौ बजे के बाद आकर तो देखें!

—अच्छाजी, तो इतने जल्दी मेरी रिपोर्ट भी अदालत में पहुंच गई।

हंसी का फौवारा छूटा और बात खत्म हो गई।

सत्रह

हनीफ बदला लेने के लिये बेचैन था। फातमा वाला दाँव भी पूरा न हो सका। अधूरा ही रह गया था। अदीब से एक बार मिलने के बाद दोबारा मिलना न हुआ।

वह यह जान गया कि जाहिदा को अकरम अपने घर ले गया। उसने एक अइयार औरत से बात-चीत की और उसे मना लिया कि वह अकरम की बीवी को जाहिदा के बारे में उलटी-सीधी पढ़ा दे।

वह बूढ़ी मक्कार औरत, झुकी हुई कमर, हाथ में डंडा लिये डगमगाती कदम से जब अकरम के घर में आई तो रजिया छालियाँ कतर रही थी और जाहिदा धूप में अपने बाल सुखा रही थी।

आते ही मटक कर जाहिदा से बोली—

—जाहिदा बिटिया, ऐहे, तुम यहां ?

जाहिदा ने ध्यान से देखते हुए कहा—

बड़ी बी, मैंने आपको पहचाना नहीं।

बूढ़ी ने हिलते हुए गर्दन को रोकने का प्रयत्न करते हुए कहा—

बेटी अब तू मुझे क्यों पहचनाने लगी। मगर मैं, तुझे, तेरी माँ को, तेरे मियाँ को सबको जानती हूँ।

यह कहकर वह रजिया के पास आ बैठी। जाहिदा पीछे आई और हैरत से बोली—

—बड़ी बी, मैंने तो तुम्हें कभी नहीं देखा।

बूढ़ी ने रजिया से आँख मिलाते हुए कहा—

—अल्ला अपना करम रखे बेटी, तू जिसे देख ले उस पर...अल्लाह की रहमत हो जाये।

जाहिदा का दिल यह सुनकर धड़कने लगा।

बूढ़ी अब रजिया से बोली—

बेटी, यह लड़की तो शहर भर में बदनाम है। अपनी माँ से भी ज्यादा नाम पाया है। इसका मियां इसके लच्छन देखकर इसे कब का छोड़ चुका है। अब यह तेर मियाँ को जोंक बनकर लिपट गई है। पता है तेरा मियाँ किसके पीछे बिगड़ा है,

—नहीं, मुझे तो नहीं मालूम।

—यह वही लड़की है। जब तेरे मियां ने देखा कि रातों को गायब रहना अच्छा नहीं तो घर ले आया।

जाहिदा रोआंसी हो कहने लगी—

बड़ी बी, खुदा के लिये किसी की बेइज्जती तो न करो।

—एहे, तेरी इज्जत! मैं तो दुआ माँगती हूँ कि मुझे मौत ही आ जाये अगर तेरी सी इज्जत मुझे मिले।

फिर रजिया से बोली—

—बेटी रजिया, मैं तुमसे और तुम्हारे मियाँ, अकरम से दिली हमदर्दी रखती हूँ। मैंने जो कुछ बताना था बता दिया। अब बेटी तू जान, तेरा काम जाने। मुझे किसी के बीच में बोलने का क्या मतलब।

—बड़ी बी, तुम जाहिदा को कैसे जानती हो?

—दो-चार बार उसी मकान में देखा था जहाँ अकरम जाया करते थे। अच्छा बेटी रजिया, मैं चली आई थी किस लिए और बात कहाँ की छिड़ गई। अब फिर बताऊंगी।

बूढ़ी यह कह कर सीधी अपने घर आ गई।

जाहिदा रोने लगी। रजिया के मन में विभिन्न विचार मंडरान लगे। वह सोच रही थी—

यह वही आवारा लड़की है जिसको उन्होंने मकान खरीद कर दिया था। मेरे भाई ने कई बार मुझ से कहा था कि आपा मैंने दूल्ला भाई को उस मकान में आते-जाते देखा है। वहाँ एक लड़की रहती है, दूल्ला भाई के साथ अकसर उसे सिनेमा जाते भी देखा है।

यह डाईन मुझे डसने मेरे ही घर आ गई। मैं भी तो कहूँ किधर काम करेगी, तनखाह लेगी, खाना खायेगी। आखिर यह सब क्या है। अगर मदद करनी होती तो हजार दो हजार रुपये देकर छुटकारा पा लिया होता। अब देखो, रात को भी वह जल्दी ही घर आ जाते हैं। बारह-बारह एक-एक बजे तक इससे बातें करते हैं।

मैं भी हैरान थी कि वह इस पर इस कदर मेहरबान क्यों हैं? इसका कहा इतना क्यों मानते हैं?

इसे देखकर फूले नहीं समाते। यह हंसती हैं तो उनकी सारी थकान दूर हो जाती है।

मैं भी इस हरामजादी को आज घर से निकाल कर ही दम लूंगी।

जाहिदा की ओर देखते हुए बोली—

—अगर रोना है तो अपने कमरे में जाकर रो लो। मेरे यहाँ क्या कोई मौत हो गई है जो तुमने हबसना शुरू किया है। यह रोना घड़ी दो घड़ी का तो नहीं। सारी उम्र अपनी किस्मत को रोती रहना।

जाहिदा का इन बातों से और भी दिल दुखा और वह अपने कमरे में जाकर रोती रही।

शाम को अकरम घर आया तो रजिया मुंह फुलाये लेटी थी। बच्चा गोद में था।

जाहिदा अपने कमरे में थी। उसने घर का वातावरण बदला हुआ

देखा तो उसका माथा ठनका। वह रजिया के पास आया और उसका हाथ माथे पर से हटाकर बोला—

—क्या बात है जो आज घर में खाक उड़ रही है।

रजिया का दिल भर आया। आँसू पोंछते हुए बोली—

—खाक तो आपने उड़ा रखी हैं और पूछते मुझसे हैं। अगर यही मरजी थी तो मुझे बेकार मैके से लाये।

अकरम बिना पूछे सब समझ गया मगर वह हैरान था कि रजिया को सब कुछ मालूम कैसे हुआ? उसने रजिया से कुछ न कहा। सीधा जाहिदा के पास आया।

जाहिदा अभी तक रो रही थी। उसने जाहिदा के गुदगुदियां कीं। वह करवटें बदल-बदल कर अपना चेहरा छुपाती रही। जब अकरम ज्यादा तंग करने लगा तो वह रोने लगी।

उठकर बैठ गई और कहा—

—बेकार आपने मुझे यहाँ लाकर रजिया बहन को तकलीफ दी। मेरे लिए तो वही अंधेरी कोठरी अच्छी थी।

—आखिर मुझे भी तो बताओ हुआ क्या है?

—रजिया बहन ने नहीं बताया?

—नहीं, वह भी मुंह फुलाये बैठी है।

अकरम ने ब्योरा पूछा तो जाहिदा ने उस बूढ़ी औरत की सारी बात बता दी। वह सोच में पड़ गया कि वह बूढ़ी कौन हो सकती है। अन्त में इस नतीजे पर पहुंचा कि यह सारी कारवाई किसी दुश्मन की है।

इन सब बातों के अलावा सबसे बड़ी पेचीदगी यह थी कि अब घरेलू झगड़े को रजिया के गुस्से को किस तरह ठीक किया जाये।

उसने जाहिदा को वहीं छोड़ा और रजिया के पास आकर कहने लगा—देखो रजिया, तुम मेरी राजदार हो, जीवन साथी हो। तुम्हारी

जवानी और जवान जज बातों ने जब आँख खोली तो तुमने सिर्फ मुझे देखा। तुम्हारा बहुत हक है। तुम ही इस घर की मालिक हो। मगर यह तो मानोगी कि मेरी खुशी तुम्हारी खुशी है, मेरा दुख तुम्हारा दुख है। मुझे जाहिदा की हालत पर रहम आ गया और अब वह रहम हमदर्दी में बदल चुका है। मोहब्बत में भी बदल चुका है। मगर मुझ तुम से कम मोहब्बत नहीं, अगर ऐसा न होता तो मैं तुम्हें मैके से वापस ही क्यों लाता। आज तुम्हारे शौहर के खुशी का सवाल है तुम जो चाहो फैसला करो।

रजिया हिचकियां लेते हुए बोली—आप भी कैसी बातें करते हैं। मैं आपके ताबे हूं, जैसी आप कहेंगे वैसी करूंगी।

—प्यारी रजिया, मुझे तुम से यही उम्मीद थी।

—काश, आप औरत के दिल को समझ सकते! जब आप यह जानते हैं कि मेरी जवानी ने अपनी आंखें ही आप के गोद में खोली हैं तो मेरे सरताज, मैं यह कैसे सह लूंगी कि एक गैर औरत जिसका आप पर कोई हक नहीं, आप के दिल की रानी बन जाये। एक मर्द को एक साथ दो औरतों से मोहब्बत हो ही नहीं सकती। किसी एक ही से हो सकती है, मुझ से या जाहिदा से।

फिर कुछ ठहर कर बोली—हो सकता है आप यह न बतायें कि जाहिदा से ही मोहब्बत है। मगर मैं इस बहस में नहीं पड़ना चाहती। मैं सिर्फ आप से यह पूछती हूं कि क्या औरत आप की तरह इन्सान नहीं है?

—कौन कहता है कि औरत इन्सान नहीं है।

—तो कल अगर मैं आप से यह कहूं कि मुझ आप से तो मोहब्बत है ही, मगर मोहल्ले में फलां आदमी से भी मोहब्बत हो गई है, तो आप जरूर मुझे जान से मार डालेंगे। मगर मर्द अपनी बीवी

से साफ-साफ कह सकता है और बीवी उसे कुछ कह भी नहीं सकती। तो बताइये औरत ताबे है या नहीं।

अकरम यह सुनकर मुस्कराते हुए कहने लगा—अब तो मेरी रजिया को बहुत बातें करने आ गई हैं। मगर मेरी रजिया, मेरी अच्छी रजिया, मैं जाहिदा को अभी घर से निकाल सकदा हूं लेकिन फिर मैं भी खुश न रह सकूंगा। शायद तुम भी मेरा उतरा हुआ मुंह देखना पसन्द न करोगी।

—आप सादी कर लीजिये मगर उसे यहाँ न रखिये।

—तो फिर कहाँ रखूं।

—किसी और घर में रखिये। मैं दिल पर पत्थर रखकर दूसरी शादी की इजाजत तो दे सकती हूं। मगर उसका साथ रखना मेरे बस नहीं है।

—लेकिन रजिया, मुशकिल तो यह है कि उसका शौहर मौजूद है।

—तो, वह फिर कहाँ है ?

—यह भी पया नहीं कि वह कहां है, क्या करता है ? न तो उसे साथ रखता है और न तलाक देता है।

—अब है, नजर खुदा का ! मेरे सरताज अल्लाह को, मत भूलिये। एक जरासी दिलचस्पी के खातिर गुनाहों की गठरी न बांधिये। वह बेवा होती या तलाक न होती तो कोई बात नहीं थी। मगर ऐसी सूरत में आप का उससे मोहब्बत करना, मेरी तो समझ से बाहर है।

अकरम भी थोड़ी देर के लिये खो गया। सोचने लगा कि इन बातों का हल क्या हो सकता है। कुछ देर वह चुप बैठा विचारों के संसार में घूमता रहा। फिर उठकर जाहिदा के पास आया।

जाहिदा कहने लगी—मने सब बात सुन ली है। म रजिया बहन की बातों को मानती हूं। उनका हक है और वह हर तरह अपना हक हासिल कर सकती हैं।

—क्या बताऊं जाहिदा कुछ ऐसी उलझन में फंस गया हूं कि कुछ कहते नहीं बनता।

—अकरम इसमें उलझन की कोई बात नहीं है। तुम मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो।

—जाहिदा वह बात न कहो जो मैं कर न सकूं।

—अब तुम मजबूर कर रहे हो कि मैं खद ही किसी फैसले पर मजबूर हो जाऊं।

—अच्छा, तो तुम अपने ही मकान में रहो और मैं खर्च उठाऊंगा।

थोड़ी इधर-उधर की बातों के बाद यह बात तै हो गई। जाहिदा पहले वाले घर में वापस आ गई और अकरम ने सब इन्तजाम कर दिये।

हनीफ को जब खबर मिली तो वह समझ गया कि तीर निशाने पर बैठा है। अब उसके मन में एक और स्कीम चक्कर लगाने लगी।

कुछ दिनों बाद हनीफ जाहिदा के वहां पहुंचा। दरवाजा पर ठोकर दी। जाहिदा ने पूछा कौन है?

—मैं हूं, हनीफ।

—मैं तुम्हें नहीं जानती। न मैं दरवाजा खोलूंगी, चले जाओ।

हनीफ को गुस्सा तो बहुत आया लेकिन वह कुछ समझ बूझ कर चुपचाप लौट आया।

दूसर दिन उसने एक प्रोग्राम बनाया और रात को दो और दोस्तों के साथ जबरदस्ती जाहिदा के घर में घुस कर उससे एक खत अकरम के नाम लिखवाया।

प्यारे अकरम !

शायद तुम सोचोगे कि जाहिदा भाग गई मगर यह बात नहीं है। जाहिदा इसलिये जा रही है कि अब अकरम के पास कुछ नहीं है। वह मुफलिस के पास जाहिदा का रहना उसकी तौहीन है। मैं जा रही हूं एक दूसरे मालदार अकरम के साथ। उम्मीद है तुम ख्याल न करोगे।

तुम्हारी
जाहिदा

हनीफ ने रातों रात जाहिदा को दूसरी जगह पहुंचा दिया और उसके साथ जो ज्यादतियां हो सकती थीं, उससे वह चूका भी नहीं। अकरम जाहिदा के घर आया तो वहाँ उसे सिर्फ खत मिला जो जबरदस्ती जाहिदा से लिखवाया था।

ककरम की आंखों तले अंधेरा छा गया। उसे ऐसा जान पड़ा जैसे इस दुनिया में सब फातमा हैं। बेसवायें हैं। असमत बेचने वालियां हैं। वह बड़ी देर तक पलंग पर बैठा रहा। उसका मूड खराब हो चुका था।

आज पहली बार उसने बाहर का दरवाजा खटखटाया और ह्विस्की के पेग पर पेग पीने लगा। रात को झूमते-झामते घर पहुंचा तो रजिया उसकी हालत देखकर डर गई। ठोकर खाकर नीचे गिर पड़ा। रजिया आगे बढ़ी, अकरम को पूरी ताकत से उठाते हुए बोली—

—मेरे सिरताज आपको हो क्यो गया है ? आज आपने शराब भी पी ली। उफ, मुझे मेरे कौनसे गुनाहों की सजा मिल रही है ?

अकरम ने लड़खड़ाती जबान में कहा—बकवास मत करो, शराब तो अमृत है। अमृत जब आदमी पी लता है तो खरे-खोटे की पहचान में मुशकिल नहीं होती। मैंने इसे पीकर सब कुछ परख लिया है।

फिर एक बेढंगा हंसी हंसते हुए बड़बड़ाने लगा—

—फातमा भी रंडी, जाहिदा भी रंडी। सब औरत इस दुनिया की रंडी हैं।

रजिया का सांस तेज हो गया। वह अकरम के मुंह पर हाथ रख कर बोली—अल्लाह के वास्ते जबान रोकिये। शराब ने आप को बद-हवास कर दिया है। आपकी रजिया, जाहिदा और फातमा नहीं हो सकती।

अकरम न जाने कब तक पड़ा बड़बड़ाता रहा और रो कर सोया। रजिया रात भर रोती रही। अपने मियां के सुधार के लिये अपने अल्लामियाँ से दुआयें मांगती।

इधर हनीफ ने जाहिदा के साथ ज्यादतियों की हद कर दी। वह उसे दिन भर भूखा रखता। जब जाहिदा कमजोरी से गश खाने लगती तब वह आधा पेट खाना देता और किसी नये आदमी से जुटा देता।

एक ही माह में जाहिदा ने समझ लिया कि अब वह औरत नहीं, रंडी है, सोसाइटी का वह जान लेवा कीड़ा है जिससे लोग बच कर चलते हैं। वह ऐसा गन्दा और बदबूदार नाला है जिसकी ओर जाते हुए लोग नाक पर रूमाल रख लेते हैं।

काफी सोच विचार के बाद जाहिदा ने हनीफ से कहा—

—आखिर तुम क्या चाहते हो ?

हनीफ ने हंसते हुए कहा—अपनी मोहब्बत का बदला लेना चाहता हूं।

—वह बदला कब पूरा होगा ?

—क्या तुम हर रास्ते पर चलने के लिये तैयार हो ?

जाहिदा एक क्षण रुक गई।

हनीफ ने कहा—बोलो जाहिदा, जवाब दो।

जाहिदा ने कहा—अब मेरे लिये कोई रास्ता नया नहीं होगा। मैं हर रास्ते पर चल चुकी हूं। अगर कोई और रास्ता बाकी रह गया है तो उससे भी इनकार नहीं।

हनीफ झट बोल उठा—तो तुम कोठे पर बैठने के लिये तैयार हो जाओ।

छः माह बीत गये। जाहिदा नाच-गाने में इतनी माहिर हो गई कि उसका कोठा हर वक्त भरा ही रहता था। रंग-रूप भी अच्छा था। शरीर से भी अच्छी थी। एक बेसवा के लिये और क्या चाहिए?

जाहिदा अपने पिछले दिनों को लगभग भूल चुकी थी। अकरम जब याद आ जाता तो वह घंटों सोचती कि किस तरह अकरम से सिर्फ इतना कह दे कि वह खत जो तुमको मिला था, वह मुझसे जबरदस्ती लिखवाया गया था। वह अकरम को सच्चा प्रीतम समझती थी।

अब जाहिदा पक्की रक्का सा हो चुकी थी तो हनीफ ने रावलपिंडी से अदीब को बुलाया कि वह यहाँ का बाजारे हुस्न देखे। अदीब आना न चाहता था ताकि कहीं जाहिदा से आंखें दो-चार न हो जायें। लेकिन हनीफ की जिद ने उसे मजबूर कर दिया। वह इस शर्त पर आया कि वह किसी कोठे पर बैठ जायेगा और कोठे से उतर कर वापस लाहौर चला जायेगा। शहर में बिलकुल न घूमेगा न फिरेगा।

हनीफ उसे लेकर कोठे पर आया। अकरम को भी किसी के द्वारा बुलवा लिया गया।

अब तमाशा देखने वालों के साथ अकरम, अदीब और हनीफ बैठे थे। तबले पर थाप पड़ी। सारंगी के स्वर निकले और जाहिदा अपने कमरे से एक ड्रामाई अन्दाज में निकलने वाली थी। उसे पहले से बता दिया गया था कि आज बड़े-बड़े लोग आयेंगे। इसलिए चाल की खास लचक, आवाज में लोच कयामत ढाना चाहिए।

अकरम और अदीब नशे में चूर गर्दन झुकाये गाव तकिये के सहारे बैठे थे और हनीफ आज अपने बदले की भावना के लपकते हुए लपटों के जलने का दृश्य देखने के लिये बेचैन हो रहा था।

साजिन्दों ने आवाज मिलाई और जाहिदा अपने कमरे से मुह पर आँचल डाले यह गाती हुई निकली—

कभी हम तुम भी थे आशना, तुम्हें याद हो कि न याद हो।

वह घुंघुरुओं की ताल पर आगे बढ़ी। अकरम ने अचानक गर्दन ऊपर उठाई। उसे यह आवाज पहचानी सी लगी। जाहिदा ज्यों ही अकरम के सामने आई, ठिठक कर रह गई। अकरम हक्का-बक्का हो खड़ा हो गया। अपने आप उसके मुह से निकल पड़ा—जाहिदा!

जाहिदा का नाम सुनकर अदीब ने भी नजर उठाई और हैरत से उठ खड़ा हुआ। उसके मुँह से भी प्रश्नात्मक भाव में "जाहिदा" निकला।

जाहिदा ने दोनों को देखा। बदहवास हो सीढ़ियों की ओर भागी। अकरम और अदीब उसके पाछे थे।

जाहिदा ज्योंही सीढ़ियाँ उचक कर सड़क पर आई तो देखा कि कुछ सिपाही एक अपराधी को हथकड़ियों और बेड़ियों में जकड़े जा रहे थे।

अपराधी ने जाहिदा को देखा तो एकदम ठहर गया और बाजी कहकर जाहिदा की ओर लपका। यह वली था जो खून के अपराध में फांसी की सजा पाकर जेल की ओर ले जाया जा रहा था।

अकरम और अदीब की आँखें भी वली से मिलीं और झुक गईं। जाहिदा के हृदय पर यह लगातार चोटें थीं। वह अपने बालों को नोचती हुई चिल्ला पड़ी—उफ, यह वली है मगर फांसी के तख्ते के लिये। यह मेरा शौहर है मगर एक बेसवा के लिये। यह मेरा महबूब अकरम है मगर शराब के लिये—ही ही हा, हो हो हो, ही ही ही—और उसका दिमाग खराब हो गया।

अब लोग उस पगली को पत्थर मारते हैं।

ही ही, हा हा ! ये पत्थर तो मेरे हैं। हा, हा, हा, हा, ही, ही ही। और फिर कहती है—

—न वली मेरा, न अदीब मेरा, न अकरम मे ा, न यह दुनिया मेरी। ही ही ही, हः हः हः, हा हा हा। मगर ये पत्थर तो मेरे हैं जो मेरे जिस्म से लग जाते हैं और फिर वह एक अजीब भयावह ठहाका लगा कर सड़क पर भागती है और पगली पगली कहते हुए बच्चे घरों में घुस जाते हैं।

—समाप्त—

दुर्गासाह म्युनिसिपल लाइब्रेरी
Durga Sah
Municipal Library
NAINITAL
नैनीताल